आपके धर्मविज्ञान का निर्माण

अध्याय 4

धर्मविज्ञान में अधिकार

Manuscript

thirdmill

Biblical Education. For the World. For Free.

© थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ 2021के द्वारा

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी भाग को प्रकाशक, थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़, इनकोरपोरेशन, 316, लाइव ओक्स बुलेवार्ड, कैसलबरी, फ्लोरिडा 32707 की लिखित अनुमति के बिना समीक्षा, टिप्पणी, या अध्ययन के उद्देश्यों के लिए संक्षिप्त उद्धरणों के अतिरिक्त किसी भी रूप में या किसी भी तरह के लाभ के लिए पुनः प्रकशित नहीं किया जा सकता।

पवित्रशास्त्र के सभी उद्धरण बाइबल सोसाइटी ऑफ़ इंडिया की हिन्दी की पवित्र बाइबल से लिए गए हैं। सर्वाधिकार © The Bible Society of India

थर्ड मिलेनियम के विषय में

1997 में स्थापित, थर्ड मिलेनियम एक लाभनिरपेक्ष सुसमाचारिक मसीही सेवकाई है जो पूरे संसार के लिए मुफ्त में बाइबल आधारित शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है।

संसार के लिए मुफ़्त में बाइबल आधारित शिक्षा।

हमारा लक्ष्य संसार भर के हज़ारों पासवानों और मसीही अगुवों को मुफ़्त में मसीही शिक्षा प्रदान करना है जिन्हें सेवकाई के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ है। हम इस लक्ष्य को अंग्रेजी, अरबी, मनडारिन, रूसी, और स्पैनिश भाषाओं में अद्वितीय मल्टीमीडिया सेमिनारी पाठ्यक्रम की रचना करने और उन्हें विश्व भर में वितरित करने के द्वारा पूरा कर रहे हैं। हमारे पाठयक्रम का अनुवाद सहभागी सेवकाइयों के द्वारा दर्जन भर से अधिक अन्य भाषाओं में भी किया जा रहा है। पाठ्यक्रम में ग्राफिक वीडियोस, लिखित निर्देश, और इंटरनेट संसाधन पाए जाते हैं। इसकी रचना ऐसे की गई है कि इसका प्रयोग ऑनलाइन और सामुदायिक अध्ययन दोनों संदर्भों में स्कूलों, समूहों, और व्यक्तिगत रूपों में किया जा सकता है।

वर्षों के प्रयासों से हमने अच्छी विषय-वस्तु और गुणवत्ता से परिपूर्ण पुरस्कार-प्राप्त मल्टीमीडिया अध्ययनों की रचना करने की बहुत ही किफ़ायती विधि को विकसित किया है। हमारे लेखक और संपादक धर्मवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित शिक्षक हैं, हमारे अनुवादक धर्मवैज्ञानिक रूप से दक्ष हैं और लक्ष्य-भाषाओं के मातृभाषी हैं, और हमारे अध्यायों में संसार भर के सैकड़ों सम्मानित सेमिनारी प्रोफ़ेसरों और पासवानों के गहन विचार शामिल हैं। इसके अतिरिक्त हमारे ग्राफिक डिजाइनर, चित्रकार, और प्रोडयूसर्स अत्याधुनिक उपकरणों और तकनीकों का प्रयोग करने के द्वारा उत्पादन के उच्चतम स्तरों का पालन करते हैं।

अपने वितरण के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए थर्ड मिलेनियम ने कलीसियाओं, सेमिनारियों, बाइबल स्कूलों, मिशनरियों, मसीही प्रसारकों, सेटलाइट टेलीविजन प्रदाताओं, और अन्य संगठनों के साथ रणनीतिक सहभागिताएँ स्थापित की हैं। इन संबंधों के फलस्वरूप स्थानीय अगुवों, पासवानों, और सेमिनारी विद्यार्थियों तक अनेक विडियो अध्ययनों को पहुँचाया जा चुका है। हमारी वेबसाइट्स भी वितरण के माध्यम के रूप में कार्य करती हैं और हमारे अध्यायों के लिए अतिरिक्त सामग्रियों को भी प्रदान करती हैं, जिसमें ऐसे निर्देश भी शामिल हैं कि अपने शिक्षण समुदाय को कैसे आरंभ किया जाए।

थर्ड मिलेनियम a 501(c)(3) कारपोरेशन के रूप में IRS के द्वारा मान्यता प्राप्त है। हम आर्थिक रूप से कलीसियाओं, संस्थानों, व्यापारों और लोगों के उदार, टैक्स-डीडक्टीबल योगदानों पर आधारित हैं। हमारी सेवकाई के बारे में अधिक जानकारी के लिए, और यह जानने के लिए कि आप किस प्रकार इसमें सहभागी हो सकते हैं, कृपया हमारी वैबसाइट http://thirdmill.org को देखें।

विषय-वस्तु

परिचय......1
मध्ययुगीन रोमन कैथोलिक धर्म......1
पवित्रशास्त्र का अधिकार......2
अभिप्रेरणा......2
अर्थ......3
अस्पष्टता......3
कलीसिया का अधिकार......4
भूतकालीन अधिकार......4
तत्कालीन मध्ययुगीन अधिकार......5
शुरुआती प्रोटेस्टेन्टवाद......6
पवित्रशास्त्र का अधिकार......6
अभिप्रेरणा......6
अर्थ......7
स्पष्टता......8
कलीसिया का अधिकार......9
भूतकालीन अधिकार......10
समकालीन प्रोटेस्टेन्ट अधिकार......12
आधुनिक प्रोटेस्टेन्टवाद......13
पवित्रशास्त्र का अधिकार......13
अभिप्रेरणा......13
अर्थ......14
स्पष्टता......15
कलीसिया का अधिकार......17
भूतकालीन अधिकार......17
आधुनिक प्रोटेस्टेन्ट अधिकार......19
उपसंहार......20

आपके धर्मविज्ञान का निर्माण

अध्याय चार

धर्मविज्ञान में अधिकार

परिचय

क्या आपने कभी इस बात पर ध्यान दिया है कि हम अपने जीवन का कितना समय अधिकृत व्यक्तियों को खोजने और उनके पीछे चलने में बिताते हैं? मैं जानता हूँ कि इस आधुनिक संसार में यह बात अजीब लग सकती है, परन्तु यह सत्य है। जब हमारी कार में खराबी आ जाती है तो हम किसी ऐसे व्यक्ति को खोजते हैं जो उसे ठीक कर सके। बीमार होने पर, हम चिकित्सा क्षेत्र में अधिकृत व्यक्ति को खोजते हैं। यदि हम बुद्धिमान हैं, तो जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में, हम अधिकृत व्यक्तियों को खोज कर ध्यान से उनकी सुनते हैं और अलग-अलग स्तरों पर उनकी बातों को मानते हैं।

मसीही धर्मविज्ञान की सच्चाई भी कुछ ऐसी ही है। यदि हम बुद्धिमान हैं, तो हम धर्मविज्ञान के अधिकृत व्यक्तियों की भी सुनेंगे। हम सही दिशा में मार्गदर्शन के लिए मार्गदर्शक की खोज करते हैं और सावधानीपूर्वक उन्हें सुनते हैं। अब पहली नजर में, यह प्रतीत हो सकता है कि मसीही धर्मविज्ञान में अधिकार का प्रश्न एक आसान मामला है। परन्तु सदियों के दौरान धर्मविज्ञान में मार्गदर्शन की खोज करने वाले मसीहियों ने पाया है कि इसमें कई महत्वपूर्ण व्यावहारिक मुद्दे सामने आते हैं। मसीही धर्मविज्ञान के लिए हमें किस प्रकार के अधिकार की आवश्यकता है? उसे हम कहाँ पा सकते हैं?

आपके धर्मविज्ञान का निर्माण श्रृंखला के इस चौथे अध्याय को "धर्मविज्ञान में अधिकार" शीर्षक इसलिए दिया गया है क्योंकि धर्मविज्ञान के निर्माण के दौरान अधिकार की खोज और पालन में शामिल कुछ मुख्य मुद्दों को हम देखेंगे।

हम अपना ध्यान उन तरीकों पर केन्द्रित करेंगे जिनके द्वारा मसीहियों ने कलीसियाई इतिहास के तीन विभिन्न कालों में इन विषयों से निपटा। पहले, हम मध्ययुगीन रोमन कैथोलिक कलीसिया के धर्मवैज्ञानिक अधिकार पर विचारों को संक्षेप में बतायेंगे; दूसरा, हम जाँचेंगे कि शुरुआती प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने धर्मवैज्ञानिक अधिकार को किस तरह समझा; और तीसरा, हम देखेंगे कि आधुनिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों को इन मामलों से किस प्रकार निपटना चाहिए। आइए पहले मसीही धर्मविज्ञान में अधिकार पर मध्ययुगीन रोमन कैथोलिक विचार को देखने के द्वारा शुरूआत करें।

मध्ययुगीन रोमन कैथोलिक धर्म

इन अध्यायों में हमारा ध्यान प्राथमिक रूप से धर्म-सुधार या प्रोटेस्टेन्ट धर्मविज्ञान पर है, परन्तु प्रोटेस्टेन्ट विचारों की पृष्ठभूमि के रूप में मध्ययुगीन रोमन कैथोलिक धर्म से शुरूआत करना अक्सर सहायक होता है। जैसा कि हम देखेंगे, धर्मविज्ञान में अधिकार के बारे में धर्म-सुधार आन्दोलन का विचार मुख्यत: मध्यकालीन कलीसिया की त्रुटियों के प्रत्युत्तर में विकसित हुआ।

मध्यकालीन कलीसिया के अनुसंधान के दौरान, हम दो विषयों को देखेंगे: पहला, बाइबल के अधिकार का मध्यकालीन सिद्धान्त; और दूसरा, कलीसियाई अधिकार पर परिणामी विचार। आइए पहले मध्यकालीन रोमन कैथोलिक कलीसिया में पवित्रशास्त्र के अधिकार को देखें।

पवित्रशास्त्र का अधिकार

धर्म-सुधार से पूर्व, कलीसिया के अन्दर अलग-अलग व्यक्ति तथा सम्प्रदाय पवित्रशास्त्र को विविध तरीकों से समझते थे। फिर भी, यह कहना ठीक है कि मध्यकालीन धर्मविज्ञानियों का एक बड़ा बहुमत कम से कम सैद्धान्तिक तौर पर पवित्रशास्त्र के अधिकार पर विश्वास करता था। परन्तु व्यवहार में, मध्यकालीन कलीसिया ने बाइबल के प्रति एक ऐसी स्थिति अपनाई जिसने पवित्रशास्त्र के प्रति इस समर्पण के क्रियान्वयन को लगभग असम्भव बना दिया।

इस समस्या की जाँच करते समय, हम तीन विषयों को देखेंगे: प्रथम, मध्य युग के दौरान बाइबल की अभिप्रेरणा का चरम दृष्टिकोण; द्वितीय, पवित्रशास्त्र के अर्थ पर अत्यधिक दृष्टिकोण; और तृतीय, बाइबल की अस्पष्टता के बारे में अतिशयोक्तिपूर्ण दावे। आइए पहले हम पवित्रशास्त्र की अभिप्रेरणा के बारे में मध्यकालीन दृष्टिकोण को देखें।

अभिप्रेरणा

वृहद् स्तर पर, मध्ययुगीन कैथोलिक धर्मविज्ञानियों ने इन दोनों बातों की पुष्टि की कि बाइबल पूर्णत: परमेश्वर द्वारा अभिप्रेरित है और इसे मानवीय उपकरणों द्वारा लिखा गया। परन्तु दुर्भाग्यवश, कलीसियाई इतिहास के इस काल में, बहुत से धर्मविज्ञानी अभिप्रेरणा की अपनी-अपनी समझ के अनुसार चरम दिशाओं में पहुँच गए। उन्होंने पवित्रशास्त्र की मानवीय और ऐतिहासिक उत्पत्ति को अनदेखा कर पवित्रशास्त्र की दिव्य उत्पत्ति पर बल दिया। बाइबल की दिव्य उत्पत्ति के मध्यकालीन चरमपन्थी दृष्टिकोण के कई कारण थे।

उदाहरण के लिए, मध्यकालीन धर्मविज्ञानी नवीन-प्लूटोवाद और अरस्तुवाद जैसे यूनानी दर्शनशास्त्रों पर अत्यधिक निर्भर थे, और इन दर्शनशास्त्रों ने कई तरह से मसीही धर्मविज्ञान की श्रेणियों और प्राथमिकताओं का मार्गदर्शन किया। इन दर्शनशास्त्रों द्वारा अस्थायी और ऐतिहासिक वास्तविकताओं की बजाय अनन्तकालीन वास्तविकताओं को अत्यधिक महत्व देने के कारण, मसीही धर्मविज्ञानियों ने यह सोचना सीख लिया कि पवित्रशास्त्र के चरित्र के अनुसार इसकी ऐतिहासिक एवं मानवीय उत्पत्तियों की बजाय पवित्रशास्त्र की स्वर्गीय उत्पत्ति कहीं अधिक आवश्यक है।

इससे बढ़कर, मध्यकालीन बाइबल के विद्वान बाइबल के दिनों के प्राचीन इतिहास से इतने अधिक अनजान थे कि वे बाइबल की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का व्यावहारिक तौर पर ज्यादा लाभ नहीं उठा पाए। अत:, उन्होंने उन बातों पर बल दिया जिन्हें वे जानते थे-जैसे बाइबल में स्वर्ग के अनन्त परमेश्वर द्वारा प्रकट सार्वभौमिक सत्य शामिल हैं-और उन्होंने दूसरे विचारों को महत्व नहीं दिया।

मध्ययुगीन कलीसिया का बाइबल की दिव्य उत्पत्ति पर बल पवित्रशास्त्र के अर्थ के बारे में एक दुर्भाग्यपूर्ण विश्वास की ओर भी ले गया। यह मान लिया गया कि बाइबल की स्वर्गीय उत्पत्ति का मतलब है कि बाइबल दूसरी पुस्तकों की रीति के समान अर्थ को प्रकट नहीं करती है। इसकी अपेक्षा, परमेश्वर द्वारा अभिप्रेरित होने के कारण, पवित्रशास्त्र अर्थ से भरा हुआ है। बहुत से मध्ययुगीन धर्मविज्ञानियों ने इस बात को मानने में अगस्टीन का अनुगमन किया कि बाइबल कीअभिप्रेरणा का एक प्रमाण यह है कि पवित्रशास्त्र के पदों के बहुत से अर्थ हैं।

देखें कि अगस्टीन ने इसे On Christian Doctrine की तीसरी पुस्तक में किस प्रकार बताया:

> जब पवित्रशास्त्र के पदों की दो या अधिक प्रकार से व्याख्या की जाती है, तो लेखक द्वारा मूल रूप से इच्छित अर्थ के अबूझ रहने पर भी कोई खतरा नहीं...क्योंकि परमेश्वर पवित्र वचनों के सम्बन्ध में इससे अधिक और क्या उदार और फलदायी प्रबन्ध कर सकता था कि एक ही पद को कई प्रकार से समझा जा सके?

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

कई प्रकार से, हम पवित्रशास्त्र के प्रति अगस्टीन के ऊँचे दृष्टिकोण की प्रशंसा कर सकते हैं। बाइबल कोई साधारण पुस्तक नहीं है, और इसके असाधारण गुण इसकी दिव्य अभिप्रेरणा की ओर इंगित करते हैं। हम इस से भी सहमत हो सकते हैं कि बाइबल के कई पहलुओं का वर्णन केवल परमेश्वर द्वारा इसके लेखन की अलौकिक निगरानी के अर्थ में किया जा सकता है।

अर्थ

परन्तु अगस्टीन का दृष्टिकोण इससे भी आगे गया। उसका मानना था कि दिव्य अभिप्रेरणा के कारण बाइबल के पद एक से अधिक अर्थों से भरे हैं। बाइबल के मानवीय लेखकों के इच्छित विचारों से स्वयं को संबंधित करने की बजाय, अगस्टीन का विश्वास था कि हमें परमेश्वर द्वारा इच्छित विविध अर्थों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। हम उनके इन विचारों को "उत्कृष्ट बहुअर्थ" नाम देंगे, यह विश्वास कि बाइबल के पदों में अर्थ और मूल्य के बहुत से स्तर होते हैं क्योंकि वे परमेश्वर की ओर से आते हैं।

संभवत: उत्कृष्ट बहुअर्थ की सर्वाधिक परिचित अभिव्यक्ति जॉन कैसियन द्वारा प्रसिद्ध की गई व्याख्यात्मक विधि थी, जो क्वेड्रिगा कहलाती है। इस विधि के अनुसार, बाइबल के प्रत्येक पद के चार विविध अर्थ होने के रूप में देखा जाना चाहिए। पहला, शाब्दिक अर्थ पद का सामान्य या साधारण अर्थ था। दूसरा, रूपकीय अर्थ में सैद्धान्तिक सत्यों के लिए पदों की रूपकों के रूप में व्याख्या की जाती थी। तीसरा, नैतिक अर्थ मसीही व्यवहार के लिए नैतिक मार्गदर्शन उपलब्ध करवाता था। और चौथा, रहस्यात्मक अर्थ उन रीतियों को इंगित करता था जिनके अनुसार बाइबल के पद अन्तिम दिनों में दिव्य वायदों की पूर्ति के बारे में बात करते थे।

क्वेड्रिगा और उत्कृष्ट बहुअर्थ की अन्य अभिव्यक्तियाँ हमारे उद्देश्यों के लिए महत्वपूर्ण नहीं हैं, और बहुत से लेखकों ने दूसरे स्थानों पर उनका वर्णन किया है। हमारा ध्यान केवल इस बात पर है कि धर्म-सुधार के समय तक, मोटे तौर पर, कैथोलिक धर्मविज्ञानियों का विश्वास था कि बाइबल के पदों के अर्थ उन से कहीं बढ़कर थे जिन्हें आज हम सामान्य या साधारण अर्थ कहते हैं। और महत्वपूर्ण रूप से, उनका विश्वास था कि ये अतिरिक्त अर्थों की जड़ें उन मूल अर्थों में नहीं थी जिन्हें बाइबल के लेखक दूसरों तक पहुँचाना चाहते थे। वास्तव में, शाब्दिक या सामान्य अर्थ को एक गम्भीर धर्मवैज्ञानिक मनन के लिए निम्न स्तर का माना जाता था। इसकी अपेक्षा, धर्मविज्ञानियों को अर्थ की गहरी, छिपी हुई परतों को महत्व देने के लिए प्रेरित किया जाता था क्योंकि वे कलीसिया के लिए परमेश्वर के मन की गहराइयों को प्रकट करते थे।

अस्पष्टता

पवित्रशास्त्र की अभिप्रेरणा और अर्थ की मध्यकालीन विधि ने बाइबल की एक और विशेषता पर जरूरत से अधिक बल देने की ओर अगुवाई की: इसकी अस्पष्टता। बाइबल को एक ऐसी पुस्तक के रूप में देखा जाने लगा जो कि अत्यधिक अस्पष्ट थी, केवल उन लोगों को छोड़कर जिन्हें विशेष अलौकिक अन्तर्दृष्टि दी गई थी।

अब इस बात से हमें चकित नहीं होना चाहिए कि धर्म-सुधार आन्दोलन से पूर्व एक औसत मसीही को बाइबल की विषय सूची अस्पष्ट जान पड़ती थी। सर्वप्रथम, बाइबलों की संख्या इतनी नगण्य थी कि वे बहुत मुश्किल से मिलती थीं। इसके अलावा, लैटिन पवित्रशास्त्र और धर्मविज्ञान की प्राथमिक भाषा थी, तथा कुछ गिन-चुने उच्च शिक्षित लोगों के अलावा दूसरों को लैटिन का इतना ज्ञान नहीं था कि वे उसका ज्यादा लाभ उठा सकें। अत:, यह सही है कि इस समय के दौरान एक औसत मसीही के लिए बाइबल एक बन्द पुस्तक थी।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

परन्तु वचन को उन लोगों के लिए भी अस्पष्ट माना जाता था जिनके पास बाइबल को पढ़ने की योग्यता और अवसर थे। परमेश्वर ने वचन में अर्थ की बहुत सी परतें रखी थी जो सामान्य दृष्टि से छिपी हुई थीं।

कल्पना करें कि कोई व्यक्ति आपको एक बन्द ख़ज़ाने के बक्से की फोटो दिखाकर पूछे कि उसमें किस प्रकार का खजाना है। निस्सन्देह, यह जानना असंभव होगा कि बक्से में क्या है क्योंकि खजाना छिपा हुआ है। मध्यकालीन कलीसिया में बाइबल का भी यही सत्य था।

धर्म-सुधार के समय तक, बाइबल की अस्पष्टता के विश्वास ने धर्मविज्ञान के विकास पर बाइबल के ज्यादा व्यावहारिक या वास्तविक अधिकार को लगभग असंभव बना दिया। निश्चित तौर पर, सैद्धान्तिक रूप में, बाइबल मसीही धर्मविज्ञान के लिए परमेश्वर द्वारा अभिप्रेरित ख़ज़ाने का बक्सा बनी रही। परन्तु सारे व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए, बाइबल बन्द पुस्तक बनी रही, यह इतनी अस्पष्ट थी कि यह धर्मविज्ञानियों का उनके कार्य में मार्गदर्शन नहीं कर पाई।

पवित्रशास्त्र के अधिकार के मध्यकालीन दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए, हम अपने दूसरे विचार की ओर बढ़ने के लिए तैयार हैं: मध्यकालीन कलीसिया में कलीसियाई धर्मविज्ञान का अधिकार।

कलीसिया का अधिकार

कलीसिया के अधिकार का मध्यकालीन विचार पवित्रशास्त्र के मध्यकालीन सिद्धान्त द्वारा उठाई गई समस्याओं के समाधान के रूप में विकसित हुआ। क्योंकि बाइबल को अस्पष्ट माना जाता था, वह धर्मविज्ञान पर अधिकार के कार्य को पूरा करने में सक्षम नहीं थी। परिणामस्वरूप, धर्मविज्ञान में कलीसियाई अधिकार एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगा।

धर्मविज्ञान के लिए इस विशेष भूमिका को समझने के लिए, हम दो दिशाओं में देखेंगे: प्रथम, मध्यकालीन धर्मविज्ञानियों ने अपने भूतकाल में कलीसिया के अधिकार को किस प्रकार समझा; और द्वितीय, उन्होंने तत्कालीन कलीसियाई अधिकार को किस प्रकार समझा। आइए हम पहले भूतकाल से कलीसियाई धर्मविज्ञान के अधिकार को देखें।

भूतकालीन अधिकार

धर्म-सुधार आन्दोलन के समय तक, कैथोलिक कलीसिया ने भूतकाल में कलीसियाई अधिकार के बारे में एक विस्तृत विचार विकसित कर लिया था। निस्सन्देह, पवित्रशास्त्र को ही कलीसिया की विरासत के एक हिस्से के रूप में देखा जाता था। हाँ, जैसा हम देख चुके हैं, मध्य युग तक, पवित्रशास्त्र की शिक्षाओं को इतना अस्पष्ट माना जाता था कि उन्हें समझने के लिए दूसरे स्रोतों की आवश्यकता थी। परिणामस्वरूप, मध्यकालीन धर्मविज्ञानियों ने यह निर्धारित करने के लिए कलीसियाई धर्मविज्ञान के इतिहास में देखा कि उन्हें क्या विश्वास करना चाहिए। और उन में से अधिकांश ने कलीसिया के इतिहास को अपने लोगों की सत्य के मार्गों में अगुवाई और मार्गदर्शन करने वाले परमेश्वर के इतिहास के रूप में देखा। इस कारण, कलीसिया की भूतकालीन शिक्षा कम से कम दो रीतियों से मध्यकालीन धर्मविज्ञानियों के लिए महत्वपूर्ण थी।

एक तरफ, प्रारम्भिक कलीसियाई अगुवों पर अत्यधिक ध्यान दिया गया। पोलिकार्प, इग्नेशियस, आइरेनियस, तर्तुलियन और जस्टिन मार्टियर, तथा बाद के अगुवों जैसे अगस्टीन, अथनेशियस, एवं जेरोम के लेखों ने कलीसिया के विभिन्न क्रमों पर गहरा प्रभाव डाला। इन अगुवों को सामान्यत: अचूक नहीं माना जाता था, और कलीसिया की विभिन्न शाखाएँ पितृ परम्परा की विभिन्न धाराओं का समर्थन करती थीं।

फिर भी, अधिकांशत:, यह माना जाता था कि परमेश्वर ने इन भूतकाल के महान धर्मविज्ञानियों को विशेष अन्तर्दृष्टि प्रदान की थी और कलीसिया को उनकी शिक्षाओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए। दूसरी

तरफ, मध्यकालीन कलीसिया कलीसिया की सार्वभौमिक सभाओं: नाइसिया की सभा, कॉन्स्टेन्टिनोपल की सभा, चाल्सडन की सभा पर भी अत्यधिक आश्रित थी। इन सभाओं की खोजों को बहुत गम्भीरता से लिया जाता था। सारे व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए, मध्य युग के धर्मविज्ञानी उन्हें बाइबल की शिक्षा का अखण्ड सार मानते थे। उन से असहमत होना पवित्रशास्त्र और मसीह से असहमत होने के समान था। सदियों के बीतने के साथ, अगुवों की बहुत सी शिक्षाएँ और सार्वभौमिक सभाओं की खोजें आधिकारिक कलीसियाई परम्पराएँ बन गई। और इन परम्पराओं के दृढ़ होने पर, उन्होंने कलीसिया के विस्तृत सिद्धान्त को बनाने में सहायता की। इस कलीसियाई सिद्धान्त को मानवीय अशुद्धिपूर्ण धर्मविज्ञान नहीं माना जाता था, बल्कि धर्मविज्ञान जिस में पवित्रशास्त्र के समान अधिकार था। वास्तव में, सारे व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए, कलीसिया के सिद्धान्त ने पवित्रशास्त्र का स्थान ले लिया। धर्म-सुधार आन्दोलन से पूर्व, विश्वासयोग्य मसीहियों से इस सवाल को पूछने की अपेक्षा नहीं की जाती थी कि, “बाइबल क्या कहती है?” बल्कि यह कि, “कलीसिया ने क्या कहा है?”

मध्य युग की कलीसिया के लिए भूतकालीन कलीसियाई अधिकार जितने महत्वपूर्ण थे, पवित्रशास्त्र के सिद्धान्त ने भी उस समय तत्कालीन परिदृश्य पर एक उच्च धर्मवैज्ञानिक अधिकार की आवश्यकता को उत्पन्न किया।

तत्कालीन मध्ययुगीन अधिकार

निश्चित रूप से, सिद्धान्त में कलीसिया बाइबल के अधिकार की पुष्टि करती रही। परन्तु स्वयं बाइबल उन तत्कालीन मुद्दों पर कलीसिया का मार्गदर्शन करने में अत्यधिक अस्पष्ट थी जिन पर भूतकाल में सहमति नहीं हो पाई थी। तो, वर्तमान धर्मविज्ञानी विवादों में कलीसिया किस प्रकार मार्गदर्शन खोज सकती थी?

आसान शब्दों में, मध्यकालीन धर्मविज्ञानियों का विश्वास था कि परमेश्वर ने कलीसिया के पुरोहित-तन्त्र में जीवित अधिकारियों की एक प्रणाली को स्थापित किया है, और इस पुरोहित-तन्त्र ने मसीह की देह को अखण्ड शिक्षा उपलब्ध करवाई। वर्तमान विवादों के हल का अधिकार पुरोहितों, बिशपों, और पोप के पास था, जिसे बहुत से लोगों द्वारा कलीसिया का अचूक मुखिया माना जाता था। एक धर्मवैज्ञानिक निर्णय के निर्धारण के समय, विश्वासियों को यह पूछने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता था कि, “बाइबल क्या कहती है?” इसकी अपेक्षा, उन्हें यह पूछने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था कि, “कलीसिया का पुरोहित-तन्त्र क्या कहता है?”

कुछ दशकों पूर्व पूर्वी यूरोप के एक मुख्यत: कैथोलिक देश में मैंने एक खुली सुसमाचार प्रचार परियोजना में सेवा की। एक स्थान पर, मैंने एक युवक को बाइबल दी। वह बात करने के लिए रूका, परन्तु बाइबल लेने से मना कर दिया। उसने मुझ से कहा, “मैं बाइबल को समझ नहीं सकता। मेरे पुरोहित को मुझे बताना पड़ता है कि इसका मतलब क्या है।” “नहीं, तुम इसे समझ सकते हो,” बाइबल में यूहन्ना 3:16 निकालते हुए मैंने उस से कहा, “केवल इस पद को पढ़कर मुझे बताओ कि यह क्या कहता है।” उसने यूहन्ना 3:16 को देखा और पूरी ईमानदारी से कहा, “मैंने तुम्हें बता दिया कि मैं इसका अर्थ नहीं समझ सकता; केवल मेरे पुरोहित ही मुझे बता सकते हैं।” आधुनिक संसार में रहने के बावजूद, बाइबल के प्रति इस युवक का विचार मध्य युग के अधिकांश पाश्चात्य मसीहियों के समान ही था।

यदि परमेश्वर की इच्छा को समझने का एकमात्र मार्ग कलीसियाई अधिकारियों के द्वारा है, तो साधारण मसीहियों द्वारा बाइबल पर ध्यान देने का कोई कारण नहीं है। इस प्रकार, कलीसिया का आधिकारिक पुरोहित-तन्त्र, न कि पवित्रशास्त्र, तत्कालीन धर्मविज्ञान के लिए अचूक मार्गदर्शक का काम करता था।

मध्य युग के इन विचारों को ध्यान में रखते हुए, अब हम यह देखने की स्थिति में हैं कि प्रारम्भिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने बाइबल के अधिकार तथा कलीसियाई अधिकार को किस तरह समझा।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

शुरुआती प्रोटेस्टेन्टवाद

कई तरह से, कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों के बीच विवाद का मुख्य कारण अधिकार का प्रश्न था। क्या बाइबल कलीसिया के लिए मार्गदर्शक के रूप में कार्य करने वाली थी या भूतकाल और वर्तमान का कलीसियाई अधिकार राज करने वाला था?

पहले हम बाइबल के अधिकार के प्रोटेस्टेन्ट विचार को देखेंगे, और फिर कलीसियाई अधिकार पर प्रोटेस्टेन्ट दृष्टिकोण को देखेंगे। आइए पहले पवित्रशास्त्र के अधिकार पर प्रोटेस्टेन्ट विचार को देखें।

पवित्रशास्त्र का अधिकार

जैसा हम देख चुके हैं, पवित्रशास्त्र पर मध्यकालीन कैथोलिक दृष्टिकोण कई महत्वपूर्ण रीतियों से चरम सीमा पर था। इस भाग में, हम देखेंगे कि शुरुआती प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने अभिप्रेरणा, अर्थ, और पवित्रशास्त्र की स्पष्टता के सिद्धान्तों की पुनर्गणना करने के द्वारा इन त्रुटियों का जवाब दिया। पहले अभिप्रेरणा के सिद्धान्त को देखें।

अभिप्रेरणा

मध्यकालीन धर्मविज्ञानियों के समान शुरूआत से हमें कहना चाहिए कि सुधारवादियों ने समझ लिया कि पवित्रशास्त्र की उत्पत्ति दिव्य और मानवीय दोनों थी। एक तरफ, उन्होंने बाइबल को परमेश्वर की ओर से एक अलौकिक पुस्तक के रूप में देखा। लूथर, ज्विंगली और काल्विन ने निश्चित शब्दों में पुष्टि की कि पवित्रशास्त्र दिव्य अभिप्रेरणा द्वारा परमेश्वर के लोगों तक पहुँचा था। उन्होंने 2 तीमुथियुस 3:16 में प्रेरित पौलुस के वचनों को बहुत गम्भीरता से लिया कि:

> सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है और उपदेश, और समझाने, और सुधारने, और धर्म की शिक्षा के लिये लाभदायक है। (2 तीमुथियुस 3:16)

जैसे यह पद सिखाता है, पवित्रशास्त्र अन्तिम रूप से परमेश्वर की ओर से है, और उन्हें परमेश्वर के लोगों को पूर्णत: भरोसेमन्द विशेष प्रकाशन उपलब्ध करवाने के लिए दिया गया है।

सुधारवादियों का विश्वास था कि परमेश्वर के हाथ ने पवित्रशास्त्र को गलतियों से बचाया। परमेश्वर ने अलौकिक रूप से बाइबल के लेखकों को वर्तमान, भूतकाल और भविष्य की जानकारी दी, और उसने उनके लेखन की निगरानी की जिस से जो कुछ उन्होंने लिखा वह सही था। सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप से, दिव्य अभिप्रेरणा ने पवित्रशास्त्र को पूर्ण, अखण्ड अधिकार दिया।

परन्तु सुधारवादियों ने इस बात को मानने के द्वारा मध्यकालीन कलीसिया की गलती को नहीं दोहराया कि पवित्रशास्त्र के मानवीय लेखकों ने बाइबल की विषय सूची और अर्थ में महत्वपूर्ण योगदान दिए। बाइबल को स्वर्ग से गिरी एक पुस्तक के रूप में देखने की अपेक्षा, प्रारम्भिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने बल दिया कि पवित्रशास्त्र मानवीय उपकरणों और ऐतिहासिक प्रक्रियाओं के द्वारा आया। मानवीय लेखन के बारे में यह विचार यीशु और बाइबल के लेखकों द्वारा बाइबल को देखने की रीति के अनुरूप है।

उदाहरण के लिए, मत्ती 22:41-44 में हम पढ़ते हैं:

> जब फरीसी इकट्ठे थे, तो यीशु ने उन से पूछा, "मसीह के विषय में तुम क्या सोचते हो? वह किसका पुत्र है?" उन्होंने उससे कहा, "दाऊद का।" उसने उनसे पूछा, "तो दाऊद आत्मा में होकर उसे प्रभु क्यों कहता है? "प्रभु ने, मेरे प्रभु से कहा, मेरे दाहिने बैठ, जब तक कि मैं तेरे बैरियों को तेरे पाँवों के नीचे न कर दूँ।'"

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

(मत्ती 22:41-44)

इस पद्यांश में यीशु स्पष्ट रूप से इसके मानवीय लेखक दाऊद की ओर ध्यान आकर्षित करने के द्वारा फरीसियों को व्याकुल करने के लिए भजन 110 के पद 1 का प्रयोग करते हैं। यीशु और फरीसी इस बात पर सहमत थे कि मसीह दाऊद का वंशज होगा। परन्तु पहली सदी के पलिश्त में, दाऊद ने अपने वंशज को साधारण रूप से "प्रभु" नहीं कहा होता।

अत:, यीशु ने फरीसियों से यह बताने को कहा कि दाऊद ने अपने पुत्र को यह शीर्षक क्यों दिया। ध्यान दें कि यीशु का तर्क इस तथ्य पर आधारित था कि पवित्रशास्त्र का अर्थ आंशिक रूप से इसके मानवीय लेखकों के जीवन के विवरणों पर आधारित होता है। मूसा, यशायाह, यिर्मयाह, दाऊद, पौलुस, तथा परमेश्वर के वचन के अन्य मानवीय उपकरणों को इंगित करने वाले बाइबल के लेखकों और चरित्रों के बहुत से उदाहरण हैं। इन मानवीय उपकरणों ने पवित्रशास्त्र में महत्वपूर्ण व्यक्तिगत योगदान दिए।

इस प्रकार के उदाहरणों से, सुधारवादियों ने सही निष्कर्ष निकाला कि पवित्रशास्त्र वास्तविक मानवीय अवस्थाओं से उठा, और उन्हें लोगों द्वारा विशेष ऐतिहासिक परिस्थितियों के लिए लिखा गया। यदि मसीहियों को पवित्रशास्त्र को सही रूप में समझना है, तो उन्हें पवित्रशास्त्र की केवल दिव्य उत्पत्ति पर बल देने की अपेक्षा, उनकी मानवीय तथा ऐतिहासिक उत्पत्ति पर भी बल देना चाहिए।

बाइबल की अभिप्रेरणा के मानवीय पक्ष पर बल देना सुधारवादियों के लिए केवल सिद्धान्त से कहीं बढ़कर था; इससे पवित्रशास्त्र के अर्थ को समझने की उनकी रीतियों पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा।

अर्थ

हम इस विषय का इस रीति से संक्षेपण कर सकते हैं: बाइबल के छिपे हुए दिव्य अर्थों की खोज करने के मध्यकालीन रोमन कैथोलिक मॉडल का पालन की अपेक्षा, सुधारवादियों ने अपनी व्याख्याओं को बाइबल के पदों के शाब्दिक अर्थ पर आधारित किया जिसे मानवीय लेखक अपने वास्तविक पाठकों तक पहुँचाना चाहते थे।

अब, हमें यह ज्ञात होना चाहिए कि प्रारम्भिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने अपने आप को पवित्रशास्त्र के अर्थ की मध्यकालीन विधियों से पूरी तरह अलग नहीं किया। समय-समय पर सुधारवादी लेखनों में उत्कृष्ट बहुअर्थ के अवशेष प्रकट होते रहे। उदाहरण के लिए, भजन संहिता पर लूथर की टीका व्याख्या की इस विधि पर निरन्तर निर्भरता को दर्शाती है। फिर भी, यह कहना सही है कि सुधारवादियों ने अपने अधिकांश कैथोलिक साथियों की तुलना में निरन्तर मानवीय लेखकों के इच्छित अर्थ पर कहीं ज्यादा बल दिया। और अधिकांशत:, उन्होंने पवित्रशास्त्रीय पद्यांशों के लागूकरण को पद के वास्तविक अर्थ पर आधारित किया। प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों के लिए, यह ऐतिहासिक केन्द्र व्याख्या की धूरी था।

बाइबल के पदों के शाब्दिक या साधारण अर्थ पर प्रारम्भिक धर्म-सुधार आन्दोलन के बल को समझने के लिए, यह याद करना सहायक है कि यह व्याख्याशास्त्रीय विधि 15वीं सदी के पुनर्जागरण के द्वारा पहले ही पश्चिमी यूरोप में जड़ें जमा चुकी थी।

पुनर्जागरण या "पुन: जन्म" नाम प्राचीन रोमी और मुख्यत: यूनानी साहित्य तथा संस्कृति में उस नवीन रुचि से लिया गया जो पश्चिमी यूरोप में धर्म-सुधार आन्दोलन से पूर्व शुरू हुई। पुनर्जागरण के पूर्व, विद्वान मोटे तौर पर प्राचीन यूनानी लेखों के केवल अनुवाद से परिचित थे, और उनकी व्याख्या अधिकांशत: कलीसिया की निगरानी के अधीन थी। विभिन्न समयों पर, कलीसिया ने व्यावहारिक रूप से प्लूटो, अरस्तु, तथा अन्य यूनानी लेखकों को बपतिस्मा दिया था जिससे उनकी व्याख्या मसीही सिद्धान्त के समर्थकों के रूप में की गई। परन्तु पुनर्जागरण के दौरान, बहुत से विद्वानों ने संरक्षकों को पाया जिन्होंने कलीसियाई निगरानी से मुक्त प्राचीन अवधि के प्राचीन पदों की उनकी अभिलाषा का समर्थन किया। उन्होंने इन लेखों की उनके लेखकों के इच्छित अर्थ के अनुरूप व्याख्या करनी शुरू की। और

परिणामस्वरूप, उच्च महत्व के प्राचीन साहित्य की व्याख्या उनके ऐतिहासिक अर्थ पर ध्यान केन्द्रित करने लगी, जो अक्सर कलीसिया की शिक्षाओं के विपरीत थी।

पुनर्जागरण के दौरान, इब्रानी और यूनानी बाइबल के नये संस्करण भी प्रकाशित किए गए और इससे पवित्रशास्त्र की व्याख्या की दिशा में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया। जैसा हम देख चुके हैं, इन दिनों से पहले, बाइबल के पदों की व्याख्या मुख्यत: कलीसिया के निर्देशन के अधीन तथा कलीसियाई सिद्धान्त के समर्थन में की जाती थी। परन्तु पुनर्जागरण के सिद्धान्तों का पालन करते हुए, बहुत से बाइबल के विद्वान, विशेषत: प्रोटेस्टेन्ट कलीसिया के नियन्त्रण से मुक्त होकर वचन को पढ़ने लगे और उन्होंने अपनी व्याख्याओं को वचनों के वास्तविक ऐतिहासिक अर्थ पर आधारित किया।

सम्पूर्ण व्याख्या के आधार के रूप में वास्तविक अर्थ या शाब्दिक मतलब की ओर प्रोटेस्टेन्ट केन्द्रीयकरण पवित्रशास्त्र के अर्थ की समझ में महत्वपूर्ण बदलाव लाया। प्रोटेस्टेन्ट मसीही प्रत्येक बाइबल के पद के लिए एक एकीकृत, समरूप अर्थ की बात करने लगे।

जैसे वेस्टमिन्स्टर विश्वास अंगीकार अध्याय 1 भाग 9 इसे बताता है,

> किसी वचन का सच्चा और पूर्ण मतलब...बहुस्तरीय, परन्तु एक है।

हम इस दृष्टिकोण को अर्थ का "एकस्तरीय" विचार कह सकते हैं।

निस्सन्देह, प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने महसूस किया कि बाइबल के पद अक्सर शाब्दिक अर्थ के इशारे के आसान निर्धारण से कहीं अधिक कहते हैं। पवित्रशास्त्र के पद्यांशों के बहुत से आशय एवं मसीही सत्यों के साथ संबंध होते हैं जो वास्तविक मानवीय लेखकों की उस समय की समझने की क्षमता से कहीं परे है। परन्तु ये सभी पहलू एक, सत्य तथा पूर्ण अर्थ के हिस्से हैं क्योंकि वे पवित्रशास्त्र के शाब्दिक या साधारण मतलब के समकक्ष हैं।

अभिप्रेरणा के मानवीय पक्ष तथा पवित्रशास्त्र के एकीकृत शाब्दिक अर्थ पर बल देने के अतिरिक्त, प्रोटेस्टेन्ट धर्मविज्ञानियों ने पवित्रशास्त्र की स्पष्टता या सुबोधता पर भी बल दिया।

स्पष्टता

पवित्रशास्त्र के अस्पष्ट होने या इसके लिए अधिकृत कलीसियाई व्याख्या की आवश्यकता को देखने की बजाय, सुधारवादियों ने तर्क दिया कि बाइबल समझने योग्य थी। बाइबल की स्पष्टता के प्रोटेस्टेन्ट सिद्धान्त में कुछ तत्वों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया।

सर्वप्रथम, चलायमान छापाखाने के विस्तृत प्रयोग ने अधिक से अधिक संख्या में बाइबलों को उपलब्ध करवाया था। और बाइबल की उपलब्धता ने बदले में, मसीहियों के लिए स्वयं बाइबल को पढ़ना और यह जाँचना सम्भव बनाया कि क्या कैथोलिक कलीसिया का पवित्रशास्त्र की अस्पष्टता का दावा सही है। दूसरा, साहसी अग्रणियों ने पवित्रशास्त्र का साधारण लोगों की भाषाओं में अनुवाद करना शुरू किया और इसने भी लोगों के लिए पवित्रशास्त्र की स्पष्टता को स्वयं जाँचना संभव बनाया। तीसरा, धर्म-सुधार आन्दोलन के शाब्दिक अर्थ पर बल ने धर्मविज्ञानियों को अपनी व्याख्याओं को जाँचने एवं परखने योग्य आधार देने के योग्य बनाया। अब उन्हें बाइबल का अर्थ समझाने के लिए कलीसियाई अधिकारियों पर निर्भरता की आवश्यकता नहीं थी। इन रीतियों से पवित्रशास्त्र की जाँच ने इस विचार को बढ़ावा दिया कि कैथोलिक दृष्टिकोण के विपरीत बाइबल बहुत स्पष्ट है।

यहाँ तक कि लूथर और धर्म-सुधार आन्दोलन का विरोध करने वाले वफादार रोमन कैथोलिक इरास्मस ने इन शब्दों को लिखा:

> ... एक हल चलाने वाला भी पवित्रशास्त्र को समझ सकता है।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

इन विकासों ने प्रोटेस्टेन्ट धर्मविज्ञानियों के लिए बाइबल की स्पष्टता की पुष्टि करने और उसे फिर से मसीहियत के लिए व्यावहारिक अधिकार के रूप में स्थापित करने का मार्ग खोला। जब प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने इस नये वातावरण में बाइबल को नए तरीके से पढ़ा तो स्पष्ट हुआ कि कैथोलिक कलीसिया द्वारा अस्पष्ट घोषित बहुत से निर्णायक पदों को समझना वास्तव में तुलनात्मक रूप से आसान था। प्रोटेस्टेन्ट अनुवादकों ने पाया कि जितना अधिक उन्होंने बाइबल का अध्ययन किया, बाइबल के शिक्षा उतनी ही अधिक स्पष्ट होती गई। धर्म-सुधार आन्दोलन के आरम्भिक दशकों में, प्रोटेस्टेन्ट मसीही बाइबल की स्पष्टता के बारे में अत्यधिक आशावादी थे। यह सब बहुत साधारण जान पड़ता था: बाइबल को पढ़ें और धर्मविज्ञान को वहाँ दिए परमेश्वर के स्पष्ट प्रकाशन के अनुरूप बनायें।

परन्तु जब प्रोटेस्टेन्ट आन्दोलन ने निरन्तर पवित्रशास्त्र में काम करना जारी रखा तो वे स्वयं पवित्रशास्त्र की वास्तविकताओं से अधिक अवगत होते गए और वे बाइबल में स्पष्टता के स्तरों के बारे में बात करने लगे। यह स्पष्ट होने लगा कि बाइबल के कुछ भागों का अर्थ अन्य भागों की तुलना में ज्यादा स्पष्ट था।

जब यह स्पष्ट हुआ कि लूथर के अनुयायी एक बात पर विश्वास करते थे, काल्विन के अनुयायी दूसरी बात पर, और ज्विंगली के अनुयायी किसी और बात पर, तो बाइबल की स्पष्टता के आरम्भिक अति-आशावादी दृष्टिकोण का स्थान ज्यादा योग्य विचारों ने ले लिया। वास्तव में, इस ज्यादा परिपक्व प्रोटेस्टेन्ट विचार से हमें चकित नहीं होना चाहिए।

यहाँ तक कि 2 पतरस 3:16 में इन शब्दों को लिखते समय प्रेरित पतरस ने भी माना कि बाइबल की कुछ बातों को समझना मुश्किल है:

> [पौलुस] की पत्रियों में कुछ बातें ऐसी हैं जिनका समझना कठिन है, और अनपढ़ और चंचल लोग उन के अर्थों को भी पवित्रशास्त्र की अन्य बातों की तरह खींच तानकर अपने ही नाश का कारण बनाते हैं। (2 पतरस 3:16)

ध्यान दें कि पतरस क्या कहता है: उस ने यह नहीं कहा कि पौलुस की सारी पत्रियों को समझना आसान है; न ही उसने यह कहा कि सारी पत्रियों को समझना मुश्किल है। बल्कि, उसने कहा कि पौलुस की पत्रियों में कुछ बातें हैं जिनका समझना कठिन है।

इस प्रकार, मध्यकालीन कलीसिया के विपरीत, प्रोटेस्टेन्ट सुधारवादियों ने बाइबल को कलीसिया के अधिकार के ऊपर ठहराया। प्रोटेस्टेन्ट मसीही समझ गए थे कि उन्हें पवित्रशास्त्र में परमेश्वर के प्रकाशन से अलग नहीं किया गया था। उन्होंने पवित्रशास्त्र की स्पष्टता की पुष्टि की और परिणामस्वरूप, बाइबल को सारे कलीसियाई अधिकार के ऊपर सर्वोच्च अधिकार के रूप में पुन: स्थापित किया गया।

अब जबकि हम पवित्रशास्त्र के शुरुआती प्रोटेस्टेन्ट दृष्टिकोण को देख चुके हैं, तो हम यह देखने की स्थिति में हैं कि शुरुआती प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने कलीसियाई अधिकार को किस प्रकार देखा।

कलीसिया का अधिकार

जैसा हम देख चुके हैं, सुधारवादी बाइबल को धर्मविज्ञान के एकमात्र अखण्ड नियम के रूप में पुन: स्थापित करने के लिए पवित्रशास्त्र की अभिप्रेरणा, अर्थ और स्पष्टता के अपने विचारों पर निर्भर थे। फिर भी, हमें इस तथ्य से भी अवगत होना चाहिए कि आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट सुधारवादियों ने कलीसियाई धर्मविज्ञान के अधिकार को पूरी तरह नहीं नकारा। इसके विपरीत, प्रोटेस्टेन्ट सुधारवादियों का विश्वास था कि कलीसियाई धर्मविज्ञान में बहुत अधिक अधिकार है, परन्तु बल दिया कि यह अधिकार गौण था और पवित्रशास्त्र की शिक्षाओं के अधीन था।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

दो दिशाओं में देखने के द्वारा कलीसियाई अधिकार के बारे में प्रोटेस्टेन्ट विचार का अनुसंधान करना सहायक होगा: पहला, शुरुआती प्रोटेस्टेन्ट सुधारवादियों ने भूतकाल से कलीसिया के अधिकार को कैसे समझा; और दूसरा, उन्होंने तत्कालीन कलीसिया के अधिकार को किस प्रकार समझा? पहले भूतकालीन कलीसियाई अधिकार पर प्रोटेस्टेन्ट विचार को देखें।

भूतकालीन अधिकार

यद्यपि हम में से बहुत से लोगों के लिए इसकी कल्पना करना कठिन है, आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट सुधारवादियों ने कलीसियाई अगुवों और कलीसिया की आरम्भिक सभाओं के अधिकार को अच्छी तरह से समझा। सुधारवादियों ने कलीसिया का स्वस्थ सिद्धान्त बनाए रखा। उनका दृढ़ विश्वास था कि पवित्र आत्मा ने उन बहुत से महत्वपूर्ण सत्यों की ओर आरम्भिक कलीसिया की अगुवाई की थी जिन्हें उस समय के मसीहियों को जानने की जरूरत थी।

जैसा हम पूर्व के एक अध्याय में देख चुके हैं, सुधारवादियों ने सोला स्क्रिप्चरा, "केवल पवित्रशास्त्र" के नारे के अन्तर्गत पवित्रशास्त्र के अधिकार की बात की। दुर्भाग्यवश, आज बहुत से सुसमाचारिय मसीहियों को सोला स्क्रिप्चरा के सिद्धान्त के बारे में गम्भीर ग़लतफ़हमी है।

हमारे समय में बहुत से सुसमाचारिक मसीहियों का विश्वास है कि सोला स्क्रिप्चरा के सिद्धान्त का आशय है कि हमारे पास बाइबल के अलावा कोई और अधिकार स्रोत नहीं होना चाहिए। परन्तु धर्म-सुधार आन्दोलन का विचार यह नहीं था, और यह सोला स्क्रिप्चरा के सिद्धान्त का सही आशय नहीं है। सुधारवादियों ने अपने इस विश्वास के कारण सोला स्क्रिप्चरा पर बल नहीं दिया था कि बाइबल ही विश्वासियों के लिए एकमात्र अधिकार स्रोत है; बल्कि, उनका मतलब था कि विश्वासियों के लिए केवल बाइबल ही वह अधिकार स्रोत है जिस पर कोई सवाल नहीं उठाया जा सकता है। यह सुनने में अजीब लग सकता है, प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने सोला स्क्रिप्चरा के सिद्धान्त का दृढ़ता से बचाव इस कारण नहीं किया था कि शेष सभी अधिकारों को ठुकरा दिया था, बल्कि इसलिए कि उन्होंने अन्य धर्मवैज्ञानिक अधिकारों को उच्च सम्मान दिया।

सुविधा की दृष्टि से, वेस्टमिन्स्टर विश्वास अंगीकार अध्याय 1, पद्यांश 10 में इन मामलों के सारांश को बताना सहायक होगा:

> सर्वोच्च न्यायी, जिसके द्वारा धर्म के सारे विवादों का निर्धारण, और सभाओं के सारे निर्णयों, प्राचीन लेखकों के विचारों, मनुष्यों के सिद्धान्तों, और निजी आत्माओं की जाँच की जाती है, और जिसके निर्णय में हमें विश्राम पाना है, वह कोई और नहीं पवित्रशास्त्र में बात करने वाला पवित्र आत्मा है।

यह पद्यांश दृढ़ता से पुष्टि करता है कि पवित्रशास्त्र में बात करने वाला पवित्र आत्मा "सर्वोच्च न्यायी है जो धर्म के सारे विवादों का निर्धारण करता है।" अन्य शब्दों में, कलीसिया के सभी निर्णय पवित्रशास्त्र के प्रमाप के अनुसार लिए जाने चाहिए। परन्तु यहाँ भाषा पर ध्यान दें। बाइबल में बात करने वाला पवित्र आत्मा, "सर्वोच्च न्यायी है।" यदि कोई सर्वोच्च न्यायी है, तो इसका अर्थ है कि दूसरे न्यायी भी हैं जो सर्वोच्च नहीं हैं। वास्तव में, विश्वास अंगीकार ऐसे कुछ अधिकार स्रोतों का इस पद्यांश में वर्णन करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि महत्व के क्रमानुसार, यह सभाओं, प्राचीन लेखकों (या कलीसियाई अगुवों); मनुष्यों के सिद्धान्तों, भूतकाल और वर्तमान में कलीसिया में दूसरों की शिक्षाओं का वर्णन करते हुए; और निजी आत्माओं, यानी, किसी विशिष्ट मामले के संबंध में आन्तरिक सूझबूझ या निश्चय का वर्णन करता है। वेस्टमिन्स्टर विश्वास अंगीकार ने इन अधिकार स्रोतों को पहचाना, परन्तु उन्हें पवित्रशास्त्र के सर्वोच्च अधिकार के अधीन गौण स्थान दिया।

कैथोलिक धर्मविज्ञानियों ने सुधारवादियों को अक्सर कलीसियाई अधिकार को नकारने का दोषी ठहराया, परन्तु सोला स्क्रिप्चरा के सिद्धान्त पर बल देने के साथ सुधारवादी भूतकाल को न नकारने के प्रति सावधान थे।

सर्वप्रथम, आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट सुधारवादियों ने अक्सर प्रारम्भिक कलीसियाई अगुवों के सन्दर्भों द्वारा अपने विचारों का समर्थन किया। वास्तव में, काल्विन की Institutes of Christian Religion के बीस से अधिक दोहरावों के अनुसार, हम पाते हैं कि काल्विन ने प्रारम्भिक कलीसियाई अगुवों के साथ ज्यादा से ज्यादा बातचीत को शामिल किया। दूसरे स्थान पर, काल्विन की Institutes of Christian Religion का एक पद्यांश कलीसियाई सभाओं के अधिकार पर उसके दृष्टिकोण को स्पष्ट रूप से प्रकट करता है।

देखें कि काल्विन Institutes की चौथी पुस्तक में क्या कहता है:

> यहाँ मेरा तर्क न तो सभी सभाओं को निरस्त करना या सबके कार्यों को खारिज करना और न ही एक झटके में सबको रद्द करना है। "परन्तु," आप कहेंगे, तुम हर बात का निरादर करते हो, जिससे प्रत्येक व्यक्ति के पास सभाओं के निर्णयों को स्वीकार या इनकार करने का अधिकार हो।" बिल्कुल नहीं! परन्तु जब कभी किसी सभा का निर्णय आगे लाया जाता है, तो मैं चाहता हूँ कि लोग सबसे पहले परिश्रमपूर्वक इस बात को देखें कि यह कब हुई, किस मुद्दे पर, किस इच्छा के साथ, और किस प्रकार के लोग उपस्थित थे; फिर पवित्रशास्त्र के प्रमाप के आधार पर उस विषय को जाँचें-और इस कार्य को इस प्रकार किया जाए कि सभा की परिभाषा को सम्मान दिया जाए और यह एक अन्तरिम न्याय के समान हो। फिर भी, मेरे द्वारा वर्णित परीक्षा में व्यवधान न डालें।

यहाँ काल्विन के शब्दों में कई महत्वपूर्ण विचार प्रकट होते हैं: पहला, उसने जोर दिया कि कलीसिया की सभाओं का ऐतिहासिक रूप से समझने की आवश्यकता है। वे अटल, स्वयं परमेश्वर द्वारा दिए गए प्रत्यक्ष प्रकाशन नहीं थे। पुनर्जागरण की व्याख्यात्मक विधियों - ऐतिहासिक शाब्दिक अर्थ पर ध्यान - को कलीसिया सभाओं पर लागू किया जाना चाहिए। विश्वासियों को "इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि सभा कब हुई, किस मुद्दे पर, किस इच्छा के साथ, और किस प्रकार के लोग उपस्थित थे।"

दूसरा, यह देखना आश्चर्यजनक नहीं है कि सोला स्क्रिप्चरा के सिद्धान्त ने काल्विन की इस बात पर बल देने में अगुवाई की कि कलीसिया की शिक्षाओं को अन्ततः पवित्रशास्त्र के प्रकाश में परखा जाना चाहिए। उसके शब्दों में, "पवित्रशास्त्र के प्रमाप" को लागू करना आवश्यक है।

परन्तु तीसरा, और हमारे उद्देश्यों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण, काल्विन ने दावा किया कि भूतकाल के सिद्धान्तों को "अन्तरिम निर्णय के रूप में" स्वीकार किया जाना चाहिए। यानी, लम्बे समय से चली आ रही, कलीसिया की प्राचीन खोजों को हमारे अन्तरिम या प्रारम्भिक निर्णयों के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए; हमें उनकी शिक्षा को तब तक स्वीकार करना चाहिए जब तक कि सावधानीपूर्वक की गई बाइबल की व्याख्या का भार उन्हें गलत साबित न करे।

काल्विन की रणनीति उस बुद्धि को प्रतिबिम्बित करती है जिसने उस समय के सर्वाधिक कट्टर प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों को छोड़कर सब का मार्गदर्शन किया। प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों के बड़े बहुमत ने आरम्भिक कलीसियाई अगुवों और कलीसिया के विश्वास कथनों को दिए जाने वाले उच्च अधिकार को समझ लिया। पवित्रशास्त्र की सर्वोच्चता से प्रभावित होकर, उन्होंने भूतकालीन कलीसियाई अधिकार को अन्तरिम स्वीकृति दी।

भूतकालीन कलीसियाई अधिकार के बारे में आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट दृष्टिकोण को देखने के पश्चात्, हमें इस बात की ओर मुड़ना चाहिए कि प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने स्वयं के तत्कालीन कार्य के अधिकार को

किस प्रकार समझा। तत्कालीन धर्मवैज्ञानिक मामलों का उत्तर खोजते समय उन्होंने स्वयं तथा दूसरों के लिए किस प्रकार के अधिकार का अंगीकार किया?

समकालीन प्रोटेस्टेन्ट अधिकार

जैसा आप याद करेंगे, मध्यकालीन कैथोलिक कलीसिया ने जीवित धर्मवैज्ञानिक अधिकारों की एक विस्तृत प्रणाली को विकसित किया जिसकी पूर्ति अचूक पोप में हुई। प्रोटेस्टेन्ट धर्म-सुधार आन्दोलन ने मुख्यत: इस कलीसियाई अधिकार का विरोध किया। केवल बाइबल के अधिकार को अखण्ड रूप में स्वीकार किया जाना था। पोप, कलीसिया सभाएँ, तथा अन्य कलीसियाई अधिकार चूकने वाले और गलतियों के अधीन थे।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने कलीसिया के उचित रूप से नियुक्त शिक्षकों के अधिकार को उच्च सम्मान दिया। कलीसिया के व्यक्तिगत विद्वान या पण्डित उच्च सम्मान के योग्य हैं क्योंकि उन्होंने सुधारवादी धर्मविज्ञान को आगे बढ़ाया। वास्तव में, लगभग प्रत्येक संस्था के प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने अपने विश्वास-अंगीकार, शिक्षण-सामग्री तथा विश्वास-कथन बनाए जिन्हें कलीसिया में द्वितीय अधिकार स्रोत माना जाता था।

आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट उचित रूप से नियुक्त तत्कालीन धर्मविज्ञानियों को अत्यधिक सम्मान देते थे क्योंकि उनका विश्वास था कि पवित्रशास्त्र यह सिखाता है कि मसीह के अनुयायियों को परमेश्वर द्वारा कलीसिया में नियुक्त अधिकारियों का आदर करना चाहिए।

पवित्रशास्त्र के बहुत से भाग इस विषय को छूते हैं, लेकिन उदाहरण के लिए तीतुस 2:1,15 में तीतुस को दिया गया पौलुस का निर्देश देखें। वहाँ हम इन शब्दों को पढ़ते हैं:

> पर तू ऐसी बातें कहा कर जो खरे उपदेश के योग्य हैं।... पूरे अधिकार के साथ ये बातें कह, और समझा और सिखाता रह। कोई तुझे तुच्छ न जानने पाए। (तीतुस 2:1,15)

आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने पहचाना कि इस प्रकार के पद्यांश सिखाते हैं कि मसीह के अनुयायियों को जितना हो सके उचित रूप से नियुक्त कलीसियाई अगुवों के अधीन रहना चाहिए। मसीही धर्मविज्ञान का निर्माण अधिकार की ऐसी संरचनाओं के अलावा व्यक्तियों या समूहों का कार्य नहीं था।

बाइबल के और कलीसियाई अधिकार के बीच इस सन्तुलन का सारांश एक पुराने नारे में देखा जा सकता है जिसे अक्सर सुधारवादी खेमों में दोहराया जाता है। "सुधारवादी कलीसिया सर्वदा सुधार करती है," या लैटिन शब्दावली में दिया गया इसका संक्षिप्त रूप सेम्पर रिफोर्मान्डा: "सर्वदा सुधारने वाली।" ये नारे इंगित करते हैं कि कलीसिया की सुधारवादी शाखा ने पूरी तरह यह पहचान लिया कि कलीसियाई अधिकार जितने भी महत्वपूर्ण हों, उन्हें सर्वदा पवित्रशास्त्र की छानबीन के अधीन होना चाहिए।

अब जबकि हम मध्यकालीन कलीसिया और शुरुआती धर्म-सुधार आन्दोलन को देख चुके हैं, हम इस स्थिति में हैं कि इस अध्याय के तीसरे शीर्षक को देख सकें: आधुनिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों द्वारा इन विषयों को किस प्रकार देखना चाहिए? हमारे अपने समय में हमें पवित्रशास्त्र के अधिकार तथा कलीसिया के अधिकार के बारे में क्या विश्वास करना चाहिए?

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

आधुनिक प्रोटेस्टेन्टवाद

पहले हम इस बारे में बात करेंगे कि पवित्रशास्त्र के प्रति हमारे दृष्टिकोण किस प्रकार के होने चाहिए, और दूसरा हमारे समय में कलीसियाई अधिकार के प्रति रखे जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण दृष्टिकोणों का सुझाव देते हुए हम इन प्रश्नों का उत्तर देंगे। आइए पहले पवित्रशास्त्र के सिद्धान्त को देखें।

पवित्रशास्त्र का अधिकार

इस पूरे अध्याय में हमारे सामने आने वाले तीन मुद्दों को देखने के द्वारा हम पवित्रशास्त्र के आधुनिक दृष्टिकोणों की खोजबीन करेंगे: पवित्रशास्त्र की अभिप्रेरणा, पवित्रशास्त्र का अर्थ और पवित्रशास्त्र की स्पष्टता। हमारे समय में इन विषयों पर कई विभिन्न दृष्टिकोण सुधारवादी परम्परा के पालन का दावा करते हैं। हम पवित्रशास्त्र की अभिप्रेरणा पर आधुनिक दृष्टिकोणों से शुरू करके, इन विचारों को देखेंगे और उनके महत्व का निर्धारण करेंगे।

अभिप्रेरणा

आज प्रोटेस्टेन्ट होने का विश्वसनीय दावा करने वाला प्रत्येक व्यक्ति इन विश्वासों को अपनायेगा कि पवित्रशास्त्र परमेश्वर की ओर से अभिप्रेरित है। फिर भी इस बारे में अत्यधिक असमंजस है कि हमारे समय में अभिप्रेरणा के सुधारवादी सिद्धान्त को किस तरह बनाया जाए।

आधुनिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों के बीच तीन प्रकार के दृष्टिकोण प्रचलित हैं। पहले किनारे पर एक दृष्टिकोण है जो “औपन्यासिक अभिप्रेरणा” कहलाता है; दूसरे सिरे का दृष्टिकोण “यांत्रिक अभिप्रेरणा” कहलाता है। इन दो चरम विचारों के बीच एक दृष्टिकोण है जिसे “सुव्यवस्थित अभिप्रेरणा” कहा जाता है। आइए इन तीनों को संक्षेप में देखें।

औपन्यासिक अभिप्रेरणा का समर्थन मुख्यत: ज्यादा उदार प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों द्वारा किया जाता है। इस विचार में, बाइबल औपन्यासिक अर्थ में अभिप्रेरित है, ठीक उसी प्रकार जैसे हम शेक्सपीयर, रेम्ब्रांट, या बाक के “अभिप्रेरित” होने की बात करते हैं। परमेश्वर ने बाइबल के लेखकों को प्रेरित किया, लेकिन उनकी पत्रियों का अधीक्षण नहीं किया। इस विचार के अनुसार, पवित्रशास्त्र केवल मनुष्यों का मत है। इसलिए पवित्रशास्त्र में चूक हो सकती है और उनमें कलीसिया पर पूर्ण अधिकार की कमी है। अब, यह कहने की आवश्यकता नहीं है, कि धर्म-सुधार आन्दोलन की दिशा में बढ़ने वालों द्वारा इस विचार का इनकार करना आवश्यक है; यह बाइबल की विश्वसनीयता और सर्वोच्च अधिकार का इनकार करने के द्वारा सोला स्क्रिप्चरा के प्रति प्रोटेस्टेन्ट केन्द्रीय समर्पण को त्याग देता है।

दूसरे सिरे पर यांत्रिक अभिप्रेरणा है, जिसे कई बार “श्रुतिलेख अभिप्रेरणा” भी कहा जाता है। यह दृष्टिकोण बताता है कि पवित्रशास्त्र को लिखते समय बाइबल के लेखक निष्क्रिय थे। इस विचार के अनुसार, बाइबल का लेखक स्वयं परमेश्वर है, जबकि मानवीय लेखकों ने उसके आज्ञाकारी सचिवों के रूप में कार्य किया। वृहद् स्तर पर, अभिप्रेरणा का यह विचार भी धर्म-सुधार आन्दोलन के सिद्धान्त सोला स्क्रिप्चरा से दूर ले जाता है क्योंकि यह मानवीय लेखकों के ऐतिहासिक सन्दर्भ और वास्तविक अर्थ का इनकार करता है। जैसे सुधारवादी इस पर ध्यान देने के प्रति सावधान थे, जब पवित्रशास्त्र के शाब्दिक अर्थ के महत्व का इनकार किया जाता है, तो पवित्रशास्त्र के व्यावहारिक अधिकार में व्यवधान पड़ता है। फिर बाइबल के अर्थ का निर्धारण तथा पालन नहीं किया जा सकता है। हम पर अपने स्वयं के विचारों को बाइबल में पढ़ने का दबाव पड़ता है। परिणामस्वरूप, धर्मविज्ञान में बाइबल हमारा सर्वोच्च अधिकार स्रोत नहीं रह जाती है।

आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञान को औपन्यासिक तथा यांत्रिक अभिप्रेरणा के दोनों चरमों से बचकर अभिप्रेरणा की पूर्णत: सुव्यवस्थित प्रकृति को पुन: प्रमाणित करना चाहिए: परमेश्वर ने बाइबल के लेखकों को लिखने के लिए प्रेरित किया और उनके लेखन का अधीक्षण किया जिससे जो कुछ उन्होंने लिखा वह अचूक तथा अधिकृत था। परन्तु उसने उनके निजी विचारों, उनकी प्रेरणाओं, उनकी भावनाओं या उनके धर्मविज्ञान को दरकिनार नहीं किया। इसके विपरीत, अभिप्रेरणा के मानवीय तथा दिव्य पहलू परस्पर विरोधी नहीं थे। बल्कि, सम्पूर्ण बाइबल परमेश्वर के अटल सत्यों को प्रस्तुत करती है, परन्तु उच्च मानवीय, सांस्कृतिक रूप से परिष्कृत पदों में। बाइबल की सारी शिक्षाएँ हर काल के लिए बाध्यकारी हैं, परन्तु इसकी शिक्षाएँ विशेष परिस्थितियों के सन्दर्भ से बंधी हैं। सुव्यवस्थित अभिप्रेरणा का सुधारवादी विचार सम्पूर्ण बाइबल के मानवीय तथा दिव्य, ऐतिहासिक एवं कालातीत गुणों पर बल देता है। और इसके द्वारा, सोला स्क्रिप्चरा के सुधारवादी सिद्धान्त को बनाए रखा जा सकता है।

बिना किसी सन्देह के, बाइबल की अभिप्रेरणा के इन तीनों प्रोटेस्टेन्ट विचारों में, अपने समय में सुधारवाद को आगे बढ़ाने के इच्छुक लोग देखेंगे कि सुव्यवस्थित अभिप्रेरणा का सिद्धान्त सर्वाधिक पूर्ण रूप से प्रोटेस्टेन्ट धर्म-सुधार आन्दोलन के अनुरूप है।

अभिप्रेरणा की सुव्यवस्थित प्रकृति पर बल देने के साथ, सुधारवादी परम्परा के आधुनिक धर्मविज्ञानियों को पवित्रशास्त्र के अर्थ की प्रकृति का भी सही रूप में निर्धारण करना चाहिए।

अर्थ

एक बार फिर, इस क्षेत्र में सुधारवादी विचार के प्रतिनिधि के रूप में विचारों के सन्तुलन का सुझाव दिया गया है, परन्तु ये सारे विकल्प धर्म-सुधार आन्दोलन के आदर्शों को आगे नहीं बढ़ाते हैं। एक तरफ के विचार को "आधुनिक बहुअर्थ" कहा जा सकता है, और दूसरी तरफ के विचार को "साधारण एकार्थ" कहा जा सकता है, और बीच के विचार को "बहुस्तरीय अर्थ" कहा जा सकता है। आइए पहले आधुनिक बहुअर्थ को देखें।

हाल के दशकों में, कुछ सुधारवादी धर्मविज्ञानियों ने इस विश्वास के साथ बाइबल के पदों के बहुअर्थ के बारे में बात की है कि वचनों के कई अलग-अलग अर्थ हैं। परन्तु "उत्कृष्ट बहुअर्थ" जहाँ बाइबल की दिव्य उत्पत्ति के कारण कई अर्थों की पुष्टि करता था, वहीं "आधुनिक बहुअर्थ" आमतौर पर मानवीय भाषा की अस्पष्टताओं पर आधारित होता है।

एक प्रकार से, "आधुनिक बहुअर्थ" सिखाता है कि बाइबल के पद्यांश खाली पात्र हैं जिन्हें व्याख्याकार अर्थ से भरते हैं। निश्चित तौर पर, जिस तरह किसी पात्र का एक निश्चित आकार होता है, उसी तरह बाइबल के पदों का व्याकरण अर्थ के लिए कुछ मूलभूत मानदण्ड निर्धारित करता है। इन मानदण्डों के भीतर, बाइबल के व्याख्याकारों द्वारा विशिष्ट अर्थ की पूर्ति की जाती है।

इस आधार पर, यह तर्क दिया जाता है कि हमें शाब्दिक अर्थ की निरन्तर बाध्यता पर सुधारवादियों के बल को त्यागने की आवश्यकता है। इसकी अपेक्षा, तर्क दिया जाता है कि हमें पद के वास्तविक या शाब्दिक पर थोड़ा या कोई ध्यान दिए बिना, पद्यांशों में अपनी व्याख्या को उण्डेलना चाहिए। परन्तु हमें बहुअर्थ के इस विचार का इनकार करना आवश्यक है क्योंकि यह पवित्रशास्त्र के अधिकार को व्यर्थ ठहराता है। यह मानवीय व्याख्याकारों को अधिकार देता है कि वे पवित्रशास्त्र में अपने स्वयं के विचारों को भरें।

सन्तुलन की दूसरी तरफ एक विचार है जिसे हम "साधारण एकार्थ" कहेंगे। यह दृष्टिकोण सही रूप में इस विचार को आगे बढ़ाता है कि पवित्रशास्त्र के प्रत्येक पद्यांश का केवल एक अर्थ है, परन्तु यह गलत रूप से इस बात का इनकार करता है कि वह एकमात्र अर्थ पेचीदा हो सकता है। उदाहरण के लिए यूहन्ना 3:16 लें:

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

> क्योंकि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम किया कि उसने अपना इकलौता पुत्र दे दिया ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे वह नाश न हो परन्तु अनन्त जीवन पाए। (यूहन्ना 3:16)

एक साधारण एकार्थ को मन में रखने वाला मसीही कुछ इस प्रकार कह सकता है: “यह पद बहुत आसान है; यूहन्ना 3:16 हमें बताता है कि हमें मसीह में विश्वास करना चाहिए।”

यह सारांश सही है, परन्तु पद इससे कहीं अधिक कहता है। यह स्पष्ट रूप से परमेश्वर के प्रेम; देहधारण, मसीह की मृत्यु और पुनरुत्थान; तथा संसार, अनन्त दण्ड, और अनन्त जीवन की भी बात करता है। और चूँकि पवित्रशास्त्र के सिद्धान्त आपसी पारस्परिकता का जाल बुनते हैं, इसलिए यह पद अन्तर्निहित रूप में उन सब प्रकार के शीर्षकों की भी बात करता है जिनके बारे में शेष पवित्रशास्त्र ज्यादा प्रत्यक्ष रीति से बात करता है। अत:, इस अर्थ में, यूहन्ना 3:16 का केवल एक अर्थ है, परन्तु वह अर्थ हमारे द्वारा दिए जा सकने वाले इसके किसी भी सारांश के परे है।

जब हम इस बात को देखने में चूक जाते हैं कि पवित्रशास्त्र का अर्थ इतना पेचीदा है कि यह सर्वदा हमारी व्याख्याओं के परे होता है, तो हम एक गम्भीर खतरे में पड़ जाते हैं-बाइबल की हमारी व्याख्याओं को स्वयं बाइबल की समानता में दिखाने का खतरा। हमारी व्याख्या स्वयं बाइबल के अधिकार को ले लेती है और “सोला स्क्रिप्चरा” यानी इस विश्वास का इनकार कर देते हैं कि बाइबल हमेशा हमारी व्याख्याओं के ऊपर है।

सन्तुलन के केन्द्र में “पेचीदा एकार्थ” है जो शुरुआती सुधारवादी दृष्टिकोणों के समान है। वेस्टमिन्स्टर विश्वास अंगीकार अध्याय 1, पद्यांश 9 में “पेचीदा एकार्थ” का वर्णन करता है, जहाँ वह इन शब्दों को कहता है:

> जब किसी वचन के सही या गलत अर्थ के बारे में सन्देह हो (जो बहुअर्थी नहीं परन्तु एक है), तो इसे अन्य स्थानों पर खोजकर जानना चाहिए जहाँ वचन ज्यादा स्पष्ट है।

इस विचार में, प्रत्येक पद्यांश का एक अर्थ है, परन्तु वह एक अर्थ पेचीदा और बहुस्तरीय है जिसे पवित्रशास्त्र की सम्पूर्ण शिक्षा द्वारा स्थापित बहुस्तरीय पारस्परिक अन्तर्गाबंधों के जाल द्वारा प्रकट किया जाता है।

हमें आज पेचीदा एकार्थ के इस सुधारवादी विचार को प्रमाणित करने की आवश्यकता है क्योंकि यह प्रमाणित करता है कि बाइबल एक अधिकृत अर्थ को उपलब्ध कराने के लिए हमारा इन्तज़ार नहीं करती बल्कि स्वयं उसे प्रस्तुत करती है। साथ ही यह हमें वचन को बाइबल के हमारे सारांशों के स्तर तक गिराने से भी रोकता है। प्रत्येक वचन उसकी व्याख्या करने के हमारे सर्वोत्तम प्रयासों के ऊपर अधिकृत है। “बहु-स्तरीय एकार्थ”का यह दृष्टिकोण पवित्रशास्त्र के अर्थ को इस तरह समझने की रीति उपलब्ध कराता है जो हमें आज के समय में सुधारवादी धर्मविज्ञान को आगे बढ़ाने के योग्य बनायेगी।

अब हम बाइबल की स्पष्टता के बारे में आधुनिक सुधारवादी विचारों पर बात करने की स्थिति में हैं।

स्पष्टता

सन्तुलन पर तीन बिन्दुओं के बारे में सोचना फिर से हमारे लिए सहायक होगा। एक सिरे पर, हम पूर्ण अस्पष्टता की ओर आधुनिक प्रवृत्तियों का सामना करते हैं; और दूसरे किनारे पर हम पूर्ण स्पष्टता के प्रति आधुनिक प्रवृत्तियों का सामना करते हैं; परन्तु स्पष्टता के स्तरों का सुधारवादी सिद्धान्त बीच में है।

आज ऐसे प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों को पाना कठिन नहीं है जो बाइबल को पूर्णत: अस्पष्ट या हमसे छिपी हुई मानते हैं। अक्सर, विनाश और उत्तर-आधुनिक व्याख्याशास्त्र की रीति पर, वे पवित्रशास्त्र को अस्पष्ट मानते हैं क्योंकि उनका विश्वास है कि बाइबल विरोधाभासी तथा स्व-पराजित है, जैसा कि विशेष सभी साहित्य के बारे में सोचते हैं। उनके विचार में, बाइबल की व्याख्या के इतिहास ने व्याख्या की इतनी अधिक मुश्किलों को प्रकट किया है कि आज यह निर्धारण करना लगभग नामुमकिन है कि हमें बाइबल को किस प्रकार समझना चाहिए।

यह सत्य है कि सारे पर्याप्त मानवीय सम्प्रेषण के साथ, बाइबल के प्रकाशन के किनारों पर सदा अस्पष्टताएँ होती हैं, परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि बाइबल हर बात पर अस्पष्ट है। बाइबल में बहुत कुछ है जो पूर्णत: स्पष्ट है। यह विचार पवित्रशास्त्र की स्पष्टता में सुधारवादी विश्वास को प्रतिबिम्बित नहीं करता है। यदि हम आज सुधारवादी विचार की दिशा में बढ़ना चाहते हैं, तो हमें बाइबल की अस्पष्टता के बारे में इन अतिरेकपूर्ण विचारों को नकारना होगा।

सन्तुलन के दूसरे किनारे पर, कुछ प्रोटेस्टेन्ट लोग विश्वास करते हैं कि लगभग पूरा पवित्रशास्त्र इतना स्पष्ट है कि वे उसे जल्दी और आसानी से समझ सकते हैं। अधिकांशत: ऐसे विचारों के समर्थक बाइबल की स्पष्टता के इस आसान विचार को इस कारण पकड़े रहते हैं क्योंकि वे उन सभी व्याख्याओं को एकदम नकार देते हैं जो उनके बहुत संकीर्ण मसीही समुदायों से न हों।

पवित्रशास्त्र की स्पष्टता को बढ़ा-चढ़ाकर बताना आज सुधारवादी परम्परा के बहुत से धर्मविज्ञानियों के लिए एक बड़ी परीक्षा है। हम पवित्रशास्त्र को आधुनिक सन्देह और सनकीपन से दूर रखना चाहते हैं। परन्तु पवित्रशास्त्र की स्पष्टता को इस तरह जरूरत से अधिक आसान बनाना पवित्रशास्त्र की स्पष्टता के सुधारवादी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व नहीं करता है। जैसा हम देख चुके हैं कि आरम्भिक सुधारवादियों ने माना कि पवित्रशास्त्र के कुछ भागों को समझना यदि असम्भव नहीं तो कठिन जरूर है।

पवित्रशास्त्र की स्पष्टता के इस सन्तुलन के बीच में एक स्थिति है जो स्पष्टता के स्तरों को मानती है। वेस्टमिन्स्टर विश्वास अंगीकार अध्याय 1, पद्यांश 7 में इसी स्थिति को अपनाया गया है:

> पवित्रशास्त्र की सारी बातें अपने आप में साफ या सबके लिए स्पष्ट नहीं हैं; परन्तु उद्धार के लिए जिन बातों को जानना, विश्वास करना, और मानना जरूरी है, उन्हें पवित्रशास्त्र में किसी एक या दूसरे स्थान पर इतनी स्पष्टता से बताया गया है कि न केवल विद्वान बल्कि अनपढ़ लोग भी साधारण साधनों के प्रयोग द्वारा उनकी पर्याप्त समझ पा सकते हैं।

ध्यान दें कि अंगीकार इस बात की पहचान करता है कि जो उद्धार के लिए आवश्यक है वह किसी एक या दूसरे स्थान पर स्पष्ट है, परन्तु यह भी मानता है कि पवित्रशास्त्र में सब कुछ समान रूप से स्पष्ट नहीं है। अन्य शब्दों में, बाइबल न तो पूर्णत: अस्पष्ट है और न ही पूर्णत स्पष्ट।

आप याद करेंगे कि हमने एक पिछले अध्याय में विभिन्न मसीही सिद्धान्तों पर अपने भरोसे के विविध स्तरों की पहचान की थी। हमने "निश्चितता का शंकु" नामक मॉडल का प्रयोग किया। निश्चितता के शंकु के नीचे की ओर, ऐसे विश्वास होते हैं जिन पर हमारी हल्की पकड़ होती है क्योंकि उनके बारे में हमारे भरोसे का स्तर नीचा होता है। शीर्ष पर, मुख्य विश्वास होते हैं जिन्हें हम मजबूती से पकड़े रहते हैं, उन्हें त्यागने का अर्थ है मसीही विश्वास को त्यागना। और इन दोनों किनारों के बीच में ऐसे विश्वास होते हैं जिन पर हमारे भरोसे का स्तर अलग-अलग होता है।

पवित्रशास्त्र की स्पष्टता को इन्हीं शब्दों में सोचना सहायक होगा। पहला, उद्धार के लिए आवश्यक ज्ञान सहित, बाइबल की शिक्षा के बहुत से पहलुओं को समझने के लिए विद्वतापूर्ण प्रयास की आवश्यकता नहीं होती है। वेस्टमिन्स्टर विश्वास अंगीकार के शब्दों में, "शिक्षित" और "अशिक्षित"

समान रूप से इन बातों को समझ सकते हैं। बाइबल कीअन्य जानकारी भी इस श्रेणी के अनुरूप है। वास्तव में, बाइबल के एक बहुत बड़े हिस्से को समझना आसान है।

उदाहरण के लिए, इस बात को देखना कठिन नहीं है कि परमेश्वर ने संसार की सृष्टि की, या अब्राहम, मूसा, और दाऊद नामक व्यक्ति थे, या इस्राएली मिस्र में गए और बाद में बन्धुआई में गए। नया नियम साफ रूप से सिखाता है कि यीशु नासरत में पला-बढ़ा और वहाँ प्रेरित थे। पवित्रशास्त्र की ये तथा अन्य विशेषताएँ इतनी स्पष्ट हैं कि उन्हें जानने के लिए किसी विद्वता या शैक्षणिक प्रयास की आवश्यकता नहीं है।

दूसरा, पवित्रशास्त्र के कुछ पहलुओं के बारे में केवल गम्भीर विद्यार्थियों को पता होता है जो प्राचीन इतिहास, या पद आलोचना, या बाइबल की भाषाओं, व्याख्यात्मक विधियों, और धर्मविज्ञान जैसे विषयों का अध्ययन करते हैं। ऐसे विषयों में हम कुछ बातों की गिनती कर सकते हैं जैसे पौलुस का अन्तिम दिनों का धर्मविज्ञान, या उत्पत्ति की पुस्तक का ऐतिहासिक उद्देश्य। पवित्रशास्त्र के ऐसे पहलुओं के लिए ज्यादा विद्वतापूर्ण ध्यान की आवश्यकता होती है। परन्तु पर्याप्त शैक्षणिक प्रयासों के साथ, शुरूआत में अस्पष्ट प्रतीत होने वाली बहुत सी बातें स्पष्ट हो जाती हैं।

अन्त में, चाहे हम कितना भी प्रयास करें बाइबल के कुछ पद अस्पष्ट रहते हैं। पवित्रशास्त्र के ऐसे आयामों के स्पष्ट उदाहरण उस समय सामने आते हैं जब हम शमूएल, राजाओं और इतिहास की पुस्तक, या नये नियम के सुसमाचारों जैसे पवित्रशास्त्र के समानान्तर भागों में समन्वय का प्रयास करते हैं। यद्यपि इन क्षेत्रों में लम्बी दूरी तय कर ली गई है, परन्तु बहुत सी समस्याएँ अब भी समाधानरहित प्रतीत होती हैं।

अत:, हमें सर्वदा यह याद रखना चाहिए कि बाइबल के कुछ आयाम दूसरों से अधिक स्पष्ट हैं। इस वास्तविकता का सामना करने पर ही हम पवित्रशास्त्र के अधिकार को जिम्मेदारी से समझ सकते हैं। यद्यपि पवित्रशास्त्र का प्रत्येक भाग अखण्डनीय रूप से अधिकृत है, लेकिन व्यावहारिक स्तर पर, पवित्रशास्त्र के विभिन्न भागों की स्पष्टता के आधार पर हम इसके अधिकृत मार्गदर्शन के विविध स्तरों को समझ और इस्तेमाल कर सकते हैं। अत: हम देखते हैं कि हमारे समय में सुधारवादी परम्परा का प्रतिनिधित्व करने के लिए, हमें पवित्रशास्त्र की स्पष्टता के आधुनिक चरमों से बचना चाहिए और प्रमाणित करना चाहिए कि स्पष्टता के स्तर अलग-अलग हैं।

बाइबल के अधिकार के इन दृष्टिकोणों को ध्यान में रखते हुए, हमें अपना ध्यान आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञान में कलीसियाई अधिकार की ओर मोड़ना चाहिए।

कलीसिया का अधिकार

हम फिर दो दिशाओं में ध्यान केन्द्रित करेंगे: पहला, हम देखेंगे कि आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञानियों को भूतकाल से चले आ रहे कलीसियाई अधिकारों को किस प्रकार से देखना चाहिए; और दूसरा, हम बात करेंगे कि आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञानियों को आज कलीसियाई अधिकार को किस प्रकार से देखना चाहिए। आइए पहले भूतकाल को देखें।

भूतकालीन अधिकार

जैसा कि हमने देखा, आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट समझ गए थे कि पवित्र आत्मा ने भूतकाल में कलीसिया को बहुत से सत्य सिखाए थे। उन्होंने अगुवों की शिक्षाओं, विश्वास-कथनों और लम्बे समय से चली आ रही कलीसिया की परम्पराओं को अन्तरिम निर्णय के रूप में स्वीकार करने के द्वारा उन्हें उचित सम्मान दिया तथा पालन किया। फिर भी, आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने कलीसिया की भूतकालीन शिक्षाओं के ऊपर पवित्रशास्त्र सर्वोच्चता की दृढ़ पुष्टि के द्वारा इस व्यवहार में सन्तुलन भी बनाए रखा।

उन्होंने भूतकाल पर भरोसा किया, परन्तु उन्होंने कलीसिया की सारी शिक्षाओं का पवित्रशास्त्र के प्रमाप के आधार पर मूल्यांकन भी किया।

दुर्भाग्यवश, आज सुधारवादी धर्मविज्ञानी आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट स्थिति के इन दोनों पहलुओं को मज़बूती से थामे रखने में अक्सर कठिनाई महसूस करते हैं। तीन दिशाओं पर ध्यान देना सहायक है जिनमें हम जा सकते हैं: एक सिरे पर परम्परावाद, बाइबलवाद दूसरी तरफ, और इन दोनों चरमों के बीच सेम्पर रिफोर्मान्डा की सुधारवादी रीति।

एक तरफ, आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञानी अक्सर "परम्परावाद" के जाल में फँस जाते हैं। परम्परावाद से हमारा मतलब है, वे उन व्यवहारों की ओर भटक जाते हैं जो मध्यकालीन रोमन कैथोलिक परम्परावाद के अत्यधिक समान हैं। सुधारवादी धर्मविज्ञानियों ने पवित्रशास्त्र के अधिकार की पुष्टि की और वे निश्चित तौर पर कैथोलिकवाद की परम्पराओं को अस्वीकार करते हैं। परन्तु, बहुत बार, सुधारवादी परम्परावादी सुधारवादी विश्वास की भूतकालीन अभिव्यक्तियों को इतना अधिक महत्व देते हैं, कि व्यावहारिक स्तर पर, वे भूतकाल को पर्याप्त रूप से जाँचने में असफल हो जाते हैं।

यदि आज आपको सुधारवादी धर्मविज्ञानियों के बारे में अत्यधिक जानकारी है, तो आपने संभवत: इस प्रवृत्ति को देखा होगा। अक्सर सुधारवादी धर्मविज्ञानी भूतकालीन सैद्धान्तिक स्थितियों और व्यवहारों को इस हद तक अपनाते हैं कि इन परम्पराओं को वर्तमान विचार तथा व्यवहार के लिए अखण्ड आधारों के रूप में ले लिया जाता है। बहुत बार सुधारवादी धर्मविज्ञानियों में धर्मवैज्ञानिक सवालों का उत्तर "बाइबल क्या कहती है?" पूछने की अपेक्षा केवल यह पूछने के द्वारा देने की होती है कि, "सुधारवादी विश्वास अंगीकार क्या कहते हैं?"

दूसरी तरफ, भूतकालीन कलीसियाई अधिकार को देखते समय आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञानी दूसरे चरम की ओर भी चले जाते हैं। पुनर्जागरण आधुनिकवाद के मसीही अनुवाद में वे "बाइबलवाद" में गिर जाते हैं। ये धर्मविज्ञानी इस प्रकार कार्य करते हैं मानो प्रत्येक मनुष्य को भूतकालीन प्रोटेस्टेन्ट परम्परा की सहायता के बिना बाइबल के आधार पर प्रत्येक धर्मवैज्ञानिक मामले का निर्णय करने की आवश्यकता हो।

स्वयं को कलीसिया की सुधारवादी शाखा से जोड़ने वाले धर्मविज्ञानी बार-बार सुधारवादी परम्परावाद के प्रति इस प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं, "इसका कोई मतलब नहीं है कि कलीसिया ने क्या कहा है। मैं केवल इस बात की परवाह करता हूँ कि बाइबल क्या कहती है।" इस प्रकार का अलंकार-शास्त्र सर्वोच्च अधिकार स्रोत के रूप में पवित्रशास्त्र की अधीनता को स्वीकार करने से कहीं आगे जाता है। यह परमेश्वर के आत्मा द्वारा कलीसिया को दी गई बुद्धि को अनदेखा करता है, और यह धर्मवैज्ञानिक निर्णय केवल उन व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूहों को प्रदान करता है जो वर्तमान में कार्यरत हैं।

आज धर्म-सुधार आन्दोलन की दिशा में चलने के लिए, सेम्पर रिफोर्माण्डा के सिद्धान्त की पुन: पुष्टि करने की आवश्यकता है। हमें सुधारवादी परम्परा के महत्व को अनदेखा किए बिना पवित्रशास्त्र की सर्वोच्चता की पुष्टि करने का प्रयास करना चाहिए।

दूसरी तरफ, आज सेम्पर रिफोर्माण्डा की माँग है कि हम अन्तरिम निर्णयों के रूप में न केवल कलीसियाई अगुवों तथा सभाओं को, बल्कि हमारे अपने सुधारवादी विश्वास अंगीकारों तथा सुधारवादी परम्पराओं को भी स्वीकार करें। हमारे पास वेस्टमिन्स्टर विश्वास अंगीकार, वेस्टमिन्स्टर छोटी एवं बड़ी प्रश्नोत्तरी, हेडलबर्ग प्रश्नोत्तरी, बेल्जिक विश्वास अंगीकार तथा डोर्ट का कैनन है। इन अभिलेखों के अतिरिक्त हमारे पास भूतकाल के अगुवों तथा धर्मविज्ञानियों की अनगिनत कम-औपचारिक पत्रियाँ हैं। परन्तु दूसरी तरफ इन भूतकाल के अधिकारों को सर्वदा पवित्रशास्त्र के अखण्डनीय शिक्षा के अधीन होना चाहिए। आज धर्म-सुधार आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए, हमें भूतकालीन कलीसियाई अधिकारों को पवित्रशास्त्र के अधिकार के अधीन इस प्रकार का महत्व देना सीखना चाहिए।

इस बात को देखने के बाद कि आज सुधारवादी धर्मविज्ञानियों को भूतकाल से किस प्रकार संबंधित होना चाहिए, हमें उतने ही महत्वपूर्ण विषय की ओर मुड़ना चाहिए: सुधारवादी धर्मविज्ञानियों को आधुनिक कलीसियाई अधिकारों को निर्धारण किस प्रकार करना चाहिए। हमें अपने समय में विकसित हो रही धर्मवैज्ञानिक व्यवस्थाओं के अधिकार को किस प्रकार समझना चाहिए?

आधुनिक प्रोटेस्टेन्ट अधिकार

हमने देखा कि आरम्भिक प्रोटेस्टेन्ट मसीहियों ने कलीसिया में उचित रूप से नियुक्त अगुवों द्वारा विकसित धर्मविज्ञान की पुष्टि की परन्तु उन्होंने इस बात का ध्यान रखा कि आधुनिक कलीसियाई अधिकार पवित्रशास्त्र की शिक्षा से भी ऊपर न हो जाएँ। दुर्भाग्यवश, एक बार फिर, आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञानियों को इन प्रारम्भिक प्रोटेस्टेन्ट दृष्टिकोणों को मानना कठिन जान पड़ता है। अपने समय में रहते हुए सुधारवादी धर्मविज्ञानियों को समझने के प्रयास में वे चरम सीमा की ओर चले जाते हैं।

एक तरफ, सुधारवादी धर्मविज्ञानी आज की सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं के बारे में सन्देहपूर्ण होते हैं। दूसरी तरफ, बहुत से लोग हमारे समय की सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं के बारे में सिद्धान्तवाद की ओर चले जाते हैं। परन्तु प्रमाणिक सुधारवादी धर्मविज्ञान का मार्ग “आधुनिक सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं में विश्वासयोग्य” बनने का प्रयास करना है।

आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञान में अत्यधिक सन्देह या सिद्धान्तवाद की अपेक्षा, यह दृष्टिकोण एक “विश्वासयोग्य व्यवस्थाओं” को बनाने की इच्छा को स्वीकार करता है। आइए हम स्पष्ट करें कि विश्वासयोग्य व्यवस्थाओं से हमारा क्या मतलब है। हमारे अर्थ को समझने के लिए इस बात को जाँचना सहायक है कि हम धर्मवैज्ञानिक कथनों की सत्यता को किस प्रकार समझते हैं।

अत्यधिक सन्देह और सिद्धान्तवाद जिसका हम इन दिनों में सामना करते हैं के अस्तित्व का आंशिक कारण यह है कि सैद्धान्तिक कथनों की जाँच अक्सर आसान दोहरी शब्दावली में की जाती है। पारम्परिक निराकार तार्किक सत्य सारणियों के समान, सैद्धान्तिक कथनों को अक्सर सही या गलत के रूप में देखा जाता है। परन्तु वास्तविकता में, इस निराकार दोहरे मॉडल से पीछा छुड़ाना सहायक है। सैद्धान्तिक कथनों के सत्य के महत्व को श्रेणीगत शब्दावली, सत्य और झूठ के बीच फैली हुई संभावनाओं की श्रृंखला के रूप में देखना कहीं अधिक सहायक है। सभी धर्मवैज्ञानिक कथन कम या ज्यादा सत्य या झूठ होते हैं, इस बात के आधार पर कि वे पवित्रशास्त्र की अचूक शिक्षा को कितनी निकटता से प्रतिबिम्बित करते हैं।

सन्तुलन के एक तरफ, हम पाते हैं कि कुछ धर्मविज्ञानी आधार बाइबल की शिक्षा का इतनी अच्छी तरह से वर्णन करती हैं कि हम अपने अच्छे विवेक में उन्हें सत्य कह सकते हैं। अब, निस्सन्देह, ये कथन सिद्ध नहीं हैं, परन्तु वे सत्य के रूप में स्वीकार किए जाने के बहुत निकट हैं, जब तक कि दूसरी योग्यताएँ उठकर यह प्रकट न करे कि वे पर्याप्त नहीं हैं। सन्तुलन की दूसरी तरफ, अन्य धर्मवैज्ञानिक आधार पवित्रशास्त्र की शिक्षा से इतने दूर हैं कि उन्हें गलत ठहराना उचित है, जब तक कोई योग्यता यह न दिखाए कि वे स्वीकृत हैं।

उदाहरण के लिए, इस कथन को लें, “परमेश्वर सब बातों के ऊपर सर्वोच्च है।” अब, यह कथन बाइबल की शिक्षा के इतना निकट है कि उसे सत्य ठहराने में कोई समस्या नहीं है। बाइबल सिखाती है कि परमेश्वर अपनी सारी सृष्टि के ऊपर सर्वोच्च है। फिर भी, चूँकि इस कथन में सुधार किया जा सकता है, इस कारण, कुछ हद तक, यह अधूरा है। उदाहरण के लिए, यदि हम बाइबल के विश्वास को ईश्वरवाद या भाग्यवाद से अलग ठहरा रहे हैं, तो वास्तव में इस कथन का गलत प्रभाव हो सकता है। यह पथभ्रष्ट कर सकता है, यदि हम इसे योग्य ठहराने के लिए दिव्य प्रावधान की वास्तविकता को शामिल न करें, कि परमेश्वर ऐतिहासिक घटनाओं में व्यवहार करता है।

इसी प्रकार, यह कथन "यीशु परमेश्वर है" पवित्रशास्त्र के इतना निकट है कि अधिकांश परिस्थितियों में उसे सत्य के रूप में स्वीकार किया जाए। हम सन्तुष्ट हो सकते हैं, कि यह पवित्रशास्त्र की शिक्षा का प्रतिनिधित्व करता है। परन्तु हम महसूस करते हैं कि कुछ सन्दर्भों में, जैसे कि मसीही गलत शिक्षाओं से निपटते समय, यह कथन सत्य को धुँधला कर सकता है; यह पथभ्रष्ट कर सकता है। बाइबल यह भी सिखाती है कि यीशु पूर्ण मनुष्य है। और, कुछ परिस्थितियों में, मसीह की मानवता को शामिल करने के लिए इस कथन का उपयोग कर सकते हैं कि "यीशु परमेश्वर है," जिससे हम सन्तुष्ट हो सकें कि यह सत्य को पर्याप्त रूप से अभिव्यक्त करता है।

अन्त में, हम आधुनिक धर्मवैज्ञानिक व्यवस्थाओं के बारे में ये बातें कह सकते हैं। कुछ धर्मवैज्ञानिक कथन पवित्रशास्त्र के इतने निकट हैं कि वे सत्य माने जाते हैं। दूसरे पवित्रशास्त्र से इतने दूर हैं कि वे गलत माने जाते हैं। सारी धर्मवैज्ञानिक व्यवस्थाओं के बारे में एक बात सत्य है: उन्हें सुधारा जा सकता है। यह आरम्भिक सुधारवादी उक्ति: सेम्पर रिफोर्माण्डा, "सर्वदा सुधारने वाली" से अधिक कुछ नहीं है। या जैसे मैं इसे बताना पसन्द करता हूँ, "एक अन्तिम धर्मवैज्ञानिक विचार कल्पना की कमी से अधिक कुछ नहीं है।"

हमारा यही मतलब होता है जब हम कहते हैं कि आधुनिक सुधारवादी धर्मविज्ञान का लक्ष्य विश्वासयोग्य धर्मवैज्ञानिक व्यवस्थाओं को उत्पन्न करना है। एक तरफ हम आधुनिक कलीसियाई धर्मविज्ञान के प्रति सन्देहपूर्ण नहीं हैं; हम कलीसिया आज जो कहती है उसके सम्पूर्ण अधिकार या अधीनता की आवश्यकता को अस्वीकार नहीं करते हैं। दूसरी तरफ, हम पूर्णत: सिद्धान्तवादी नहीं हैं; हम इस बात पर जोर नहीं देते हैं कि आधुनिक व्यवस्थाएँ सिद्ध हैं। इसके विपरीत, विश्वासयोग्य सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं को विकसित करने के लिए हम परमेश्वर द्वारा हमें दिए गए सारे संसाधनों-वचन की व्याख्या, समुदाय में बातचीत, और मसीही जीवन-का नम्रता और जिम्मेदारी से उपयोग करते हैं।

हम अपनी शिक्षाओं को जितना हो सके पवित्रशास्त्र की शिक्षाओं के अनुरूप बनाना चाहते हैं। हमारे सिद्धान्त पवित्रशास्त्र के जितने निकट होंगे, उनका अधिकार उतना ही अधिक होगा। परन्तु सभी मामलों में, कलीसिया के धर्मविज्ञान को सदैव पवित्रशास्त्र के अधीन रखा जाना चाहिए। हमारा लक्ष्य विश्वासयोग्य धर्मवैज्ञानिक व्यवस्थाओं को उत्पन्न करना है।

उपसंहार

इस अध्याय में हमने बाइबल के तथा कलीसियाई अधिकार के बीच संबंध पर अनुसंधान किया। हमने मध्य युग में विकसित हुए कई दृष्टिकोणों को देखा। हमने यह भी देखा कि धर्म-सुधार आन्दोलन ने किस प्रकार इन दृष्टिकोणों में सुधार किया। और अन्त में, हमने धर्म-सुधार आन्दोलन के विचारों को अपने समय के बाइबल के तथा कलीसियाई अधिकार पर लागू करने की आवश्यकता को देखा।

मसीही धर्मविज्ञान के निर्माण के लिए बाइबल के तथा कलीसियाई अधिकार का सावधानीपूर्ण निर्धारण आवश्यक है। इस अध्याय में सीखे हुए सिद्धान्तों को ध्यान में रखने के द्वारा, हम उन बहुत सी समस्याओं से बच सकेंगे जिन्होंने भूतकाल में कलीसिया के धर्मविज्ञान को परेशान किया और हमें आज भी परेशान करती हैं। हम ऐसे धर्मविज्ञान का निर्माण कर सकेंगे जो कलीसिया की सेवा करे और परमेश्वर को महिमा दे।